ओ३म्

सत्यापन क्रमांक : RAJHIN/2015/60530

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

हिन्दी मासिक

वर्ष : ४ अंक : ४५ १ अगस्त २०१८ जोधपुर (राज.) पृ.:३६ मूल्य १५० ₹ वार्षिक

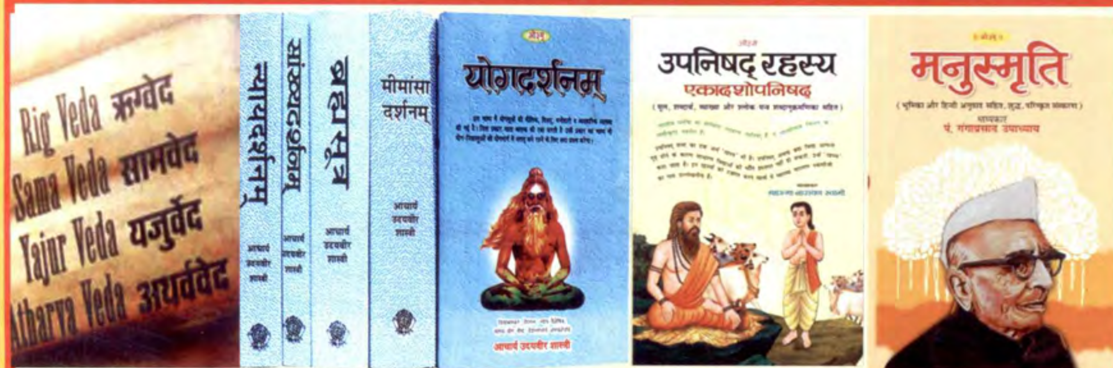

आषाढ़ पूर्णिमा पर स्मृति भवन न्यास में मुख्य यजमान
राजस्थान के लोकायुक्त श्री सज्जनसिंहजी कोठारी सपत्नीक आहुति देते हुए

आषाढ़ पूर्णिमा पर स्मृति भवन न्यास में मुख्य यजमान राजस्थान के लोकायुक्त
श्री सज्जनसिंहजी कोठारी सपत्नीक द्वारा वृक्षारोपण करते हुए

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् । -ऋग्वेद ९।६३।५

सबको श्रेष्ठ बनाओ

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश का मुख्य प्रयोजन

महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व, कृतित्व, व उनके द्वारा लिखित समस्त साहित्य तथा उनके सार्वभौमिक अद्वितीय कार्यों व सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार, स्थापना व व्यवहार में साकार करने के लिये कार्य करना ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर का मुखपत्र

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

वर्ष : ४ अंक : ४५

दयानन्दाब्द : -१९५

विक्रम संवत् : श्रावण २०७५

कलि संवत् ५११९

सृष्टि संवत् :१,९६,०८,५३,११९

मार्गदर्शक
पं. सत्यानन्दजी वेदवागीश,

सम्पादक मण्डल :
प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर
डॉ. सुरेन्द्रकुमार, हरिद्वार
डॉ. वेदपालजी, मेरठ
पं. रामनारायण शास्त्री, सिरोही
आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

कार्यवाहक सम्पादक :
कमल किशोर आर्य
Email: sampadakmdsprakash@gmail.com
9460649055

प्रकाशक :
महर्षि दयानन्द सरस्वती
स्मृति भवन न्यास, जसवन्त कॉलेज
के पास, जोधपुर ३४२००१

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है । किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र जोधपुर ही होगा ।
Web.-www.dayanadsmritinyas.org.

वार्षिक शुल्क :१५० रुपये
आजीवन शुल्क : ११०० रुपये
(१५वर्ष)

अनुक्रमणिका

	क्या	कहाँ
१.	सम्पादकीय....	४
२.	स्तुति व प्रार्थना...	७
३.	वेदवचन........	८
४.	स्वराज्य की अर्चना.....	१०
५.	दयानन्द कौन है.......	११
६.	अथ ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका.....	१५
७.	ऋषिगाथा......	१९
८.	आर्यसमाज का इतिहास.....	२४
९.	सर्वत्र व्याप्त परमात्मा और.....	२६
१०.	स्मृति भवन में वृक्षारोपण....	३२
११.	आर्य मरुधर व्यायामशाला में यज्ञ..	३२
१२.	वार्षिकोत्सवःसरदारपुरा,शास्त्रीनगर.	३३
१३.	अन्तर्राष्ट्रीय महासम्मेलन : दिल्ली..	३४

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास
बैंक ऑफ बडौदा खाता संख्या-01360100028646
IFSC BARB0JODHPU
यह पांचवा अक्षर जीरो है

सम्पादकीय

स्वतंत्र भारत में तंत्र निर्णय–१

लगभग साढ़े बारह सौ वर्षों की प्रत्यक्ष गुलामी के बाद १५ अगस्त १९४७ को भारत आजाद हुआ। किन्तु आजादी क्या है? आजादी के बाद शासित लोगों में क्या परिवर्तन आया? कौनसे मानवीय, समाजिक और राष्ट्रीय मूल्य बदले? आजादी के भारतीय पर्याय स्वतंत्र को समझें, तो स्पष्ट हो जाता है हम पराए तंत्र से दुखी थे, और अपना तंत्र चाहते थे। इसलिए हम "स्व–तंत्र" स्थापित करने के लिए आजाद हुए। पराया तंत्र तो उस समय विशेष रूप से जो राज्यसत्ता के कारण प्रभावी था वह अंग्रेजियत (पाश्चात्य सभ्यता) या ईसाईयत था, जिसने भारत में लगभग सवा सौ वर्ष राज्य किया। क्या अंग्रेजों का तंत्र गया और उसे किसी अन्य तंत्र ने प्रतिस्थापित किया?

१५ अगस्त १९४७ की स्थिति प्राप्त करने के लिए जो प्रयास किये गये थे, उनका परिणाम तो प्राप्त हो गया। यदि इससे अधिक कुछ प्राप्त करना था तो उसके लिए किए गए प्रयासों से कोई इतिहासविद् अवगत करावें।

१९0६ में ढाका में मुस्लिम लीग की स्थापना के साथ ही स्वतंत्रता की इच्छा से सुनहरे रंगे भारत के राजनैतिक आकाश में खूनी घटाएँ छाने लगी थी। मुस्लिम लीग ने **"इस्लाम खतरे में"** का नारा दिया और १९३० के दशक में पाकिस्तान किसी संदेह या संभावना से बढ़कर एक योजना का रूप ले चुका था। कांग्रेस ने खिलाफत आंदोलन में सहयोग करके मुस्लिमों का समर्थन या साथ जताया था। इसके पीछे गॉधीजी की सोच यह थी कि गत लगभग बारह सौ वर्षों से हिन्दू मुस्लिम सामंजस्य के साथ रह रहे थे। किन्तु वे मुस्लिम पाकिस्तान बनाने वाले मुस्लिमों से अलग थे और आजादी के बाद भी, बल्कि १९८0 के दशक तक ऐसे मुसलमानों के घर में होली दिवाली मनते, विवाह पर रातीजोगे होते और उनमें हिन्दू देवी देवताओं के गीत गाते मैंने देखे हैं। इन घरों की औरतें और पुरुष हिन्दू पहनावा ही पहनते थे। मुस्लिम रीति–रिवाज इनको पसंद ही नहीं थे। ये बिना मन के धर्मान्तिरित होने वाले हिन्दू ही थे। इन नाम से मुस्लिम और व्यवहार से हिन्दू लोगों को तबलीगों के प्रचार से और इस्लाम से बहिष्कृत करने के डर से और घर वापसी का विकल्प न होने से कट्टर होते मैनें देखा है। गॉधी ने गुजरात में भी तत्समय ऐसा ही देखा होगा। गुजरात में तो आज भी हिन्दू पहनावा मुस्लिम औरतों में मिल ही जाता है। पुनः विषय पर आते हैं। खिलाफत आंदोलन से अधिकांश मुसलमान अंतर्राष्ट्रीय मुस्लिम बिरादरी और कट्टरता के ही पास आए, भारत और सौम्यता के पास नहीं आए। मुस्लिम लीग ने भी खिलाफत आंदोलन में कांग्रेस का साथ नहीं दिया। दूसरे विश्वयुद्ध में कांग्रेस ने भारतीय जनता का मत लिए बिना भारत का नाम मित्र राष्ट्रों के साथ जोड़ देने के लिए अंग्रेजों का ही नहीं, तत्कालीन राष्ट्रसंघ का भी विरोध किया था और अंग्रेजों को समर्थन देने के लिए पहले स्वराज्य देने की मांग रखी थी। किन्तु मुस्लिम लीग ने अंग्रेजों के पक्ष में रहकर अंग्रेजों के दिलों में राजनैतिक स्थान बनाया।

अब स्वाधीनता आन्दोलन के परिणाम पर विचार करते हैं। स्वाधीनता संग्राम अंग्रेजों के अधीन स्थानीय शासकों (देशी और विदेशी भी) का था, महर्षि दयानन्द से, आर्यसमाज से, इसकी

शिक्षण संस्थाओं से प्रेरित क्रांतिकारियों का था; कांग्रेस में स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की तपस्या से प्रेरित नागरिक राजनैतिक आंदोलनकारियों का था, जिसके बाद स्वाधीनता जनता की सोच का विषय बना था। तब जनता ने स्वदेशी और विदेशी के अंतर को पहचानकर अपने स्वत्व का अभिमान करना आरंभ किया था। किन्तु इन सबका संघर्ष सिर्फ और सिर्फ अंग्रेजों से था। मुस्लिम लीग ने किसके खिलाफ संग्राम किया। मुस्लिम लीग के क्रान्तिकारियों का नामों की सूची बनाइए। मुस्लिम लीग सिर्फ भारत के यथासंभव बड़े टुकड़े पर सत्ता के लिए कार्य कर रही थी। भारत का एक एक सैनानी सम्पूर्ण भारत की स्वाधीनता के लिए लड़ रहा था, किन्तु कौनसा स्वतंत्रता सैनानी मुस्लिम लीग से लड़ रहा था, या बँटवारे के खिलाफ लड़ रहा था और कैसे ? मुस्लिम लीग का कौनसा व्यक्ति अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ रहा था व कैसे और यदि अंग्रेजों के खिलाफ कोई भी लीगी नहीं लड़ रहा था तो लीगी कर क्या रहे थे?– चिंतन करें!

अंग्रेज सर्वत्र सीधे राज नहीं करते थे, बल्कि अधिकांशतः वे भारत के बिखरे प्रान्तीय शासकों पर और उनके द्वारा प्रजा पर राज करते थे। शेष जो सवा ग्यारह सौ वर्ष की प्रत्यक्ष गुलामी म्लेच्छ आक्रांताओं के रूप में थी, उससे आजाद होने के लिए अंग्रेजी राज या उसके बाद क्या किसी ने कोई निर्णायक लड़ाई लड़ी? सत्ता के हस्तांतरण में सशस्त्र क्रांतिकारियों की कोई भूमिका नहीं थी। हाँ! नेताजी सुभाष यदि होते तो ऐसी भूमिका निभा सकते थे। आजाद भारत में राजशाही या सामन्तशाही या ठाकुरशाही न होकर लोकतंत्र होगा– यह निश्चय निश्चित रूप से कांग्रेस के नेतृत्व में जनता का था। इसीलिए स्वतंत्रा के बाद जनता के प्रजामण्डल आंदोलन ने राजाओं, ठाकुरों, नवाबों और सामन्तों को ले देकर सत्ता छोड़ने को बाध्य किया था।

भारत के आजाद होने से पहले ही पाकिस्तान तो बन चुका था।

अब स्वतंत्रता संग्राम के अधूरेपन पर विचार करते हैं। आठवीं शताब्दी के आरम्भ में मुहम्मद बिन कासिम द्वारा सिंध के राजा दाहरसेन पर आक्रमण के बाद से भारत में मुस्लिम सत्ताओं का विस्तार और विभाजन होता चला गया। भयानक तूफान के बीच जैसे बिजली कौंधती है, वैसे ही गुलामीकाल के इस इतिहास के स्याह पन्नों के बीच बीच में कभी कोई स्वर्णिम बिजली माँ भारती के वीर पुत्रों द्वारा म्लेच्छों से प्रतिकार के रूप में कौंधती आज भी देखी जा सकती है। अगस्त १९४७ में विभाजित भारत आज भी पूछ रहा है कि स्वतंत्रता का आंदोलन भारत से विदेशी राज्य को विदा करने को था या भारत की भूमि को दो राजसत्ताओं में विभाजित करने के लिए। सौभाग्य था इस देश का जो तत्समय पूर्वांचल सहित वन्य प्रदेशों की स्थिति आज जैसी नहीं थी, क्योंकि शासक अंग्रेज लगभग एक सदी तक तो आपने राज्य का विस्तार और उसे सुरक्षित रखने में ही व्यस्त थे। इस्लाम की तरह सत्ता के दम पर ईसाईयत के प्रसार का उनको समय नहीं मिल पाया। अन्यथा एक नहीं अनेक वेटीकन भी भारत में होते।

अतः अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध भारतीयों का संघर्ष यदि स्वतंत्रता संग्राम कहा जाए तो विभाजन का औचित्य कोई बता नहीं सकता। विभाजन के सत्य को सामने रखने पर अंग्रेजों से संघर्ष में बहुत से समूहों के, बहुत से उद्‌देश्य सामने आएंगे। अंग्रेजी राज में भारत मूल भारतीय ऋषि संस्कृति से संबध रखनेवालों के साथ साथ उन सब का भी देश था जो अंग्रेजपूर्व लगभग सवा ग्यारह सौ वर्षों से इस देश को गुलाम बनाए हुए थे। तब तो पुर्तगाली भी थे। गोवा और

तटवर्ती प्रदेशों को देख लो! ईसाई फ्रांसीसी थे। पांडिचेरी देख लो! मुसलमान थे जो अंग्रेजों के आगमन के ठीक पहले अधिकांश भारत पर शासन करते थे। इनके अलावा उन भारतीय मतों का भी भारत था, जिन मतों के उद्भव के कारण भारत इस्लाम के आगमन से भी लगभग चार हजार वर्ष पूर्व से मानसिक स्वतंत्रता और विवेक खो चुका था। इनके कारण ही भारत राष्ट्रीय और सामाजिक स्तर पर ही नहीं, पारिवारिक स्तर पर भी खण्ड खण्ड हो चुका था। अर्थात् इनके तंत्र की असफलता तो सिद्ध थी। अब प्रश्न उठता है अंग्रजों से आजाद होकर तंत्र किसका लागू हो? स्वाधीन भारत के लोकतांत्रिक विचारकों ने इस पर मनन कर संविधान बनाया। इस संविधान में हर वर्ग के लिए, हर लिंग के लिए, हर मत के लिए, हर वंचित के लिए व्यवस्था है और मानवीय आधार पर भी है। यह अलग बात है कि व्यवस्था विशेष में लाभ प्राप्त करने वाला व्यवस्था में बदलाव नहीं चाहता, जिसके कारण कई अल्पकालीन व्यवस्थाएँ मानों अमर सी हो रही है। परिणामतः संविधान कई भले लोगों के लिए बोझिल होता जा रहा है। इस संविधान को बनाने वालों के राज के ७१ वर्ष और इसके लागू होने के ६६ वें वर्ष तक इसमें शताधिक संशोधन हो चुके हैं, फिर भी हर फिरके को लगता है कि उसके साथ अन्याय हो रहा है। अनेकता को एकता में बांधने के लिए संविधान बनाया गया। अनेक वर्ग यदि संविधान के अनुसार चलते रहते या संविधान में वर्ग विशेष के लिए बिना गुण दोष के विशेष प्रावधान, गुणदोष के आधार पर सख्ती से लागू होते तो अनेकता संभवतः एकता में बदल चुकी होती। किन्तु अधिकांश संविधान संशोधनों पर विचार करने पर पता चलता है कि यह तात्कालिक लाभ याकि वोटबैंक को ध्यान में रखकर किए गए हैं। अतः संविधान का पूर्ण सम्मान करते हुए भी हम इसके सभी प्रावधानों को हर दिल अजीज़ नहीं कह सकते, भले ही इसके कारण नागरिकों की अपरिपक्वता में छिपे हों। इस संवैधानिक तंत्र में हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई कोई भी अपने को निरापद नहीं मानता। एक वर्ग के लिए हितकारी प्रावधान को दूसरे वर्ग अपने विपरीत मानते है और पात्रता हो या न हो अपने लिए भी वैसे ही हितकारी प्रावधान की मांग करते हैं, भले ही उससे अन्य किसी भी वर्ग का अहित हो। ऐसे में अब प्रश्न उठता है कि भारत में तंत्र किसका हो, तंत्र क्या हो?

मत–मतांतरों (जिनमें जैन, बौद्ध, चार्वाक, भक्ति मार्गी, आदि हजारों देशी संप्रदाय है) से क्या हमें अपना तंत्र मिल सकता है। इतिहास साक्षी है कि इन मत–सम्प्रदायों ने वैदिक युगीन विवेकवान बुद्धिमान भारतीयों या आर्यों का विवेक ही छीन लिया। खंड खंड कर दिया व्यक्ति को, परिवार को, समाज को, राष्ट्र को– चक्रवर्ती साम्राज्य से भिखारी बना दिया और उसे भी खंड–खंड कर दिया। कारण कि इनमें सुदृढ़ राजतन्त्र का विकास ही नहीं हुआ। बल्कि वैदिक काल के सुदृढ़ राज्यतंत्र को भी अपने आर्थिक और सामाजिक स्वार्थों की खातिर इन्होनें अज्ञान, अन्याय, अभाव, आलस्य, पुरुषार्थहीनता, अकर्मण्यता, भेदभाव, छुआछूत, स्वार्थ, संग्रह और षड्रिपुओं की दीमक लगाकर नष्ट कर दिया। विभाजित स्वतन्त्र भारत के समाज में भी इनका तंत्र समाज में चलता रहा, जिसके कारण विदेशी मत फलते फूलते चले गए और आज पुनः वह स्थिति आ गई कि भारत को विभाजन के कगार पर खड़ा माना जा रहा है। अर्थात् स्वदेशी सम्प्रदायों का तन्त्र असफल है। तब क्या विदेशी सम्प्रदायों को अपना तंत्र चलाने दें? (क्रमशः)

–कमलकिशोर आर्य

प्रार्थनाविषय :

समुद्रोऽसि विश्वव्यचाः अजोऽस्येक पादहिरसिबुध्न्या वागस्यैन्द्रमसि सदोऽस्यृतस्य द्वारौ मा मा सन्ताप्तमध्वनामध्वपते प्र मा तिर स्वस्ति मेऽस्मिन् पथि देवयाने भूयात् ।१८। -यजु. ५।३३

व्याख्यान- "**समुद्रोऽसि विश्वव्यचाः**" हे द्रवणीय स्वरूप! सब भूतमात्र आप ही में द्रवै हैं, क्योंकि कार्य कारण में ही मिलै हैं, आप सबके कारण हो तथा आपने व्याज=सहज से ही जगत् को विस्तृत किया है, इससे आप "**विश्वव्यचाः**" है "**अजोऽस्येकपात्**" आपका जन्म कभी नहीं होता और यह सब जगत् आपके किञ्चिन्मात्र एक देश में है। आप अनन्त हो।" **अहिरहस बुध्न्यः**" आपकी हीनता कभी नहीं होती तथा सब जगत् के मूलकारण हो और अन्तरिक्ष में भी सदा आप ही पूर्ण रहते हो "**वागस्यैन्द्रमसि सदोऽसि**" सब शास्त्र के उपदेशक, अनन्तविद्यास्वरूप होने से आप वाक् हो, परमैश्वर्यस्वरूप सब विद्वानों में अत्यन्त शोभायमान होने से आप ऐन्द्र हो। सब संसार आप में ठहर रहा है, इससे आप सदः=सभास्वरूप हो "**ऋतस्य द्वारौ मा मा सन्ताप्तम्**" सत्यविद्या और धर्म - ये दोनों मोक्षस्वरूप आपकी प्राप्ति के द्वार हैं, उनको सन्तापयुक्त हम लोगों के लिए कभी मत रक्खो, किन्तु सुखस्वरूप ही खुले रक्खों, जिससे हम लोग सहज से आपको प्राप्त हों "**अध्वनामित्यादि**" हे अध्वपते! परमार्थ और व्यवहार मार्गो में मुझको कहीं क्लेश मत होने दे, किन्तु उन मार्गो में मुझको स्वस्ति (आनन्द) आपकी कृपा से रहे, किसी प्रकार का दुःख हमको न रहे।।१८।। **-आर्याभिविनय से**

अपाहिज व बेसहारा गौधन की रक्षार्थ जोधपुर की

प्राचीनतम महर्षि दयानन्द गौशाला, मण्डोर

—आर्यसमाज जोधपुर रातानाड़ा के अन्तर्गत

यह गौशाला जोधपुर की 109 वर्ष पुरानी गौशाला है इसमें गायों की देखभाल उचित ढंग से की जाती है आप भी अपना समय एवं दान देकर पुण्य के भागीदार बन सकते हैं। अतः आप द्वारा दिया गया दान आयकर कानून की धारा 80जी के तहत छूट प्राप्त है। आप एवं अपने सहयोगियों से गौशाला में दान देकर 80जी की छूट प्राप्त कर लाभ प्राप्त कर पुण्य के भागीदार बन सकते हैं।

U Co Bank A/c 05630110041192
मण्डोर ब्रांच
IFSC UCBA0000563

सचिव
दुर्गादास वैदिक

वेद-वचन

विद्या-दान

शचीभिर्नः शचीवसू दिवा नक्तं दशस्यतम् ।

मा वां रातिरुप दसत्कदाचनास्मद्रातिः कदा चन ।। -ऋग्वेद १।१३९।५

पदार्थ :- हे **(शचीवसू)** उत्तम बुद्धि देकर वास करानेहारे विद्वानो ! तुम **(दिवा)** दिन वा **(नक्तम्)** रात्रि में **(शचीभिः)** कर्मों से **(नः)** हम लोगों को विद्या **(दशस्यतम्)** देओ **(वाम्)** तुम्हारा **(रातिः)** देना **(कदा, चन)** कभी **(मा)** मत **(उप, दसत्)** नष्ट हो । **(अस्मत्)** हम लोगों से **(रातिः)** देना **(कदा, चन)** कभी मत नष्ट हो ।

भावार्थः- इस संसार में अध्यापक और उपदेशक अच्छी शिक्षायुक्त वाणी से दिन-रात विद्या का उपदेश करें, जिससे किसी की उदारता नष्ट न हो ।

विद्यार्थियों के कर्त्तव्य

स्थिरो भव वीडवङ्गऽआशुर्भव वाज्यर्वन् ।

पृथुर्भव सुषदस्त्वमग्नेः पुरीषवाहणः ।। यजुर्वेद-११।४४

पदार्थः- हे **(अर्वन्)** विज्ञानयुक्त पुत्र ! तू विद्या-ग्रहण करने के लिए **(स्थिरः)** दृढ़ **(भव)** हो। **(वाजी)** नीति को प्राप्त होके **(वीड्वङ्गः)** दृढ़, अति बलवान् अवयवों से युक्त **(आशुः)** शीघ्र कर्म करनेवाला **(भवः)** हो । त्वम् तू **(अग्नेः)** अग्नि-सम्बन्धी **(सुषदः)** सुन्दर व्यवहारों में स्थित और **(पुरीषवाहणः)** पालन आदि शुभ कर्मों को प्राप्त करनेवाला **(पृथुः)** सुख का विस्तार करनेहारा **(भव)** हो।

भावार्थ :- हे अच्छे सन्तानों ! तुमको चाहिए कि ब्रह्मचर्य के सेवन से शरीर का बल और विद्या तथा अच्छी शिक्षा से आत्मा का बल पूर्ण दृढ़ कर स्थिरता से रक्षा करो और आग्नेय आदि अस्त्र-विद्या से शत्रुओं का विनाश करो । इस प्रकार माता-पिता सन्तानों को शिक्षा करें ।

वेद-ज्ञान से संसार प्रकाशित

अहमिद्धि पितुष्परि मेधामृतस्य जग्रह ।

अह सूर्य इवाजनि ।। -सामवेद -१५२।।१।२।४।८

पदार्थः- (अहम्) मैंने **(इत् हि पितुः)** पालन करनेवाले इन्द्र परमेश्वर से **(ऋतस्य)** सत्यवेद की **(मेधाम्)** धारणावती बुद्धि **(परिजग्रह)** ग्रहण की है । (इस धारणावती बुद्धि को ग्रहण करके) **(अहम्)** मैं **(सूर्य इव)** सूर्य-सा प्रकाशमान **(अजनि)** प्रसिद्ध हुआ हूँ ।

भावार्थ :- जो मनुष्य परम पिता परमात्मा से सत्य वेद-विद्या का ग्रहण करते हैं वे ही सूर्यवत् संसारभर को ज्ञान से प्रकाशित करते हैं ।

कृमि-नाश

सर्वेषां च क्रिमीणां सर्वासां च क्रिमीनाम् ।

भिनद्म्यश्मना शिरो दहाम्यग्निना मुखम् ।। -अथर्व.-५।२३।१३

पदार्थः- **(च)** और **(सर्वेषाम्)** सब **(क्रिमीणाम्)** वर कीड़ों का **(च)** और **(सर्वासाम्)** सब **(क्रिमीणाम्)** मारा कीड़ों का **(शिरः)** शिर **(अश्मना)** पत्थर से **(भिनद्मि)** मैं फोड़ता हूँ और **(मुखम्)** मुख को **(अग्निना)** अग्नि से **(दहामि)** जलाता हूँ ।

भावार्थ :- जैसे किसी वस्तु को अग्नि में जलाकर अथवा पत्थर पर तोड़कर नष्ट कर देते हैं, वैसे ही मनुष्य अपने बाहरी और भीतरी दोषों का नाश करे ।

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश का पोषण और विस्तार करें

महर्षि दयानंद सरस्वती की अंतिम कर्मस्थली जोधपुर के महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन का नियंत्रक "न्यास" अपने इस मुखपत्र के माध्यम से महर्षि के मिशन को जनसाधारण तक पहुँचाने के कार्य में संलग्न है और लागत से भी कम मूल्य में इसका वितरण कर रहा है। सदस्य संख्या बढ़ने से लागत कम होगी व प्रचार बढ़ेगा। इस पत्रिका के शुल्करूप देय राशि की सार्थकता एवं उपयोगिता बताकर स्वजनों को प्रेरित करें। अल्पव्यय में स्वाध्याय, सद्ज्ञान, संस्कार व मानवीय मूल्यों वाले पाठक आपके घर में क्यों न हो। अत्यल्प व्यय में अत्यधिक लाभ।

स्वराज्य की अर्चना

नहि नु यादधीमसि, इन्द्रं को वीर्या परः।
तस्मिन् नृम्णमुत क्रतु, देवा ओजांसि संदधुः अर्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋग् १.८०.१५

ऋषिः गोतमः राहूगणः। देवता इन्द्रः। छन्दः पङ्. क्तिः।

(नु) कोई भले ही **(नहि यात्)** न जाए, [हम तो] **(इन्द्रं)** इन्द्र के प्रति **(अधिइमसि)** जाते ही हैं। **(कः)** कौन **(वीर्या)** वीरता से **(परः)** [इन्द्र की अपेक्षा] अधिक [है]? **(तस्मिन्)** उसमें **(देवाः)** देवों ने **(नृम्णं)** बल को, **(क्रतु)** प्रज्ञा तथा कर्म को **(उत)** और **(ओजांसि)** ओजों को **(सं दधुः)** संनिहित किया है। [वह] **(स्वराज्यम् अनु)** स्वराज्य के लिए **(अर्चन)** अर्चना करने वाला [है]।

स्वराज्य की साधना अत्यन्त कठिन है। प्रथम तो विदेशी शक्तियों को बाहर निकालकर स्वराज्य प्राप्त करना ही दुष्कर है। फिर मिले हुए स्वराज्य की रक्षा कर सकना तो और भी अधिक जटिल है। इसके लिए किसी उत्कृष्ट नेता के नेतृत्व की आवश्यकता है। 'इन्द्र' ही हमारा नेता है। भले ही कोई उसके पीछे चले या न चले, हम तो चलेंगे ही, क्योंकि सामर्थ्य में उससे अधिक अन्य कौन है? देवों ने उसके अन्दर असीम शक्तियों को स्थापित किया है। वह 'स्वराज्य' की अर्चना करने वाला है।

भाइयों! वेद की यह स्वराज्य की पुकार राष्ट्रीय और आध्यात्मिक दोनों प्रकार की है। बाहर जब कोई देश पराधीन हो जाता है, विदेशी आकर उस पर अपना प्रभुत्व जमा लेते है और वे उसकी सम्पत्ति का अपहरण करने लगते हैं, तब दासता को सहते सहते अन्त में उस देश में जन-जागृति उत्पन्न होती है और उसके निवासी अपने में से ही किसी वीर, प्रज्ञावान्, कर्मण्य, ओजस्वी महापुरूष को '**इन्द्र**' चुनते हैं, अपना नेता बनाते हैं और उसके नेतृत्व में स्वतंत्रता का उद्‌घोष कर खोए हुए '**स्वराज्य**' को पुनः पा लेते हैं। प्राप्त स्वराज्य को चलाने के लिए भी वे किसी को '**इन्द्र**' राजा या प्रधानमंत्री चुनते है। इसी प्रकार अध्यात्म राष्ट्र में हमारा अपना आत्मा '**इन्द्र**' है। आभ्यंतर राष्ट्र के स्वराज्य पर भी आसुरी शक्तियाँ अपना अधिकार कर लेती है; हमारे मन, बुद्धि, प्राण, इन्द्रियाँ सबकी स्वतंत्रता का हरण हो जाता है और मनुष्य, जिसे '**देव**' बनना चाहिए, '**दैत्य**' बन जाता है। हम आत्मा को अपना नेता बनाएँ, आत्मा की वाणी सुनें, तो पुनः आध्यात्मिक स्वराज्य की प्राप्ति हो सकती है। आत्मा को ही स्वराज्य की बागडोर हम थमाये रहें तो वह स्वराज्य को स्थिर भी रख सकता है। अन्यथा पाशविक शक्तियाँ प्राप्त स्वराज्य को छीन भी सकती हैं। आओ, आत्मा को ही हम अपना नेता बनाएँ, क्योंकि उसके अन्दर देवों ने, ईश्वरीय शक्तियों ने, अपार बल, प्रज्ञान, कर्म और ओज निहित किया है। हे मेरे आत्मन्! तुम सदा ही स्वराज्य की अर्चना करते रहो।

-वेदमञ्जरी से

दयानंद कौन है—६

(स्वतंत्रता का प्रणेता)

महाभारत काल के पूर्व से ही पतन की ओर अग्रसर हो रहे आर्यावर्त्त को सर्वांगीण उन्नति की राह दिखाने वाला पॉच हजार वर्ष के इतिहास में कोई दृष्टिगोचर नहीं होता। योगेश्वर श्री कृष्ण के सद्प्रयासों से दुष्टों के संहार के बाद, जनमेजय के समय से ही पाखण्ड का बोलबाला आरंभ हो गया। फिर भी पूर्वजों के पुण्यों से और समर्थ शत्रु न होने से लगभग ढाई हजार वर्ष तक आर्यावर्त्त परतंत्र तो न हुआ, हॉ दुर्बल होता चला गया। जैन बौद्ध जैसे नास्तिक और निर्मन्यु मतों के उदय के साथ ही भारतीयों का पुरुषार्थ कुण्ठित होने लगा था, वर्णाश्रम धर्म चूर चूर हो चुके थे। फिर भी ज्ञात इतिहास में भारत पर ईसापूर्व छठी शताब्दी के अंत तक ग्रीक, पारसियों के विदेशी आक्रमण आरंभ हो चुके थे। किन्तु ये आक्रमण राजसत्ता और कोई मत की स्थापनार्थ न होकर मुख्यतः लूट और अच्छे जीवन स्तर के लिए होते थे। अतः ईसा की सातवीं शताब्दी तक कुछ समय के लिए सिकन्दर को छोड़कर किसी भी आक्रान्ता ने भारत में अपनी सत्ता स्थापित नहीं की। हॉ! शक, हूण, शीर्थियन जैसे लोग भारत में ही रच बस गए— संभवतः उनसे बेहतर जीवन स्तर ने उन्हें यहीं का होने को बाध्य किया। आठवीं शताब्दी से भारत में आक्रान्ता सत्ता के लिए भी आते रहे और लूट के लिए भी, जो क्रम लगभग बारह सौ वर्षो से कुछ अधिक चला। आश्चर्य की बात यह है कि इस अवधि में करोड़ों वर्ष तक विश्व गुरु और चकवर्तियों के देश रहे भारत पर विजय पाने वालों में अधिकांश लोग लुटेरे थे। यहॉ तक कि आधुनिक समय में १६ वीं शताब्दी में भी अंग्रेजी राज्य तो एक व्यापारिक कम्पनी ने स्थापित कर लिया, जिसे बाद में ब्रिटिश शासन ने हस्तगत किया। सोचें किसी बड़े राज्य ने भारत को आक्रांत किया होता तो क्या होता और यह भी सोचें कि एक राष्ट्र के रूप में भारत था भी या नहीं? और भी शर्मनाक मंजर तो तब होता है, जब आज भी विदेशी कम्पनियॉ भारत में अमानक सामान बेचती है; झूठा एकाधिकार हासिल कर सरकारी विभागों तक को अरबों का चूना लगा देती है (जैसे कि वाटर प्योरीफायर बनानेवाली एक विदेशी कम्पनी ने आई.एम.सी. से प्रमाणपत्र हासिल करके किया जबकि आई.एम.सी. के पास परीक्षण सुविधाएँ भी नहीं थी); खुदरा व्यापर श्रृंखला बनाकर हर सदस्य से पैसा वसूलती है और धड़ल्ले से जनता को लालच में अन्धा बनाकर भारतीयों के द्वारा ही अपना व्यापार फैलाती चली जाती हैं। क्या हो गया इस देश को?

आर्यावर्त्त के इस अंधेरे इतिहास में आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त, छत्रपति शिवाजी, वीर दुर्गादास, गुरु गोविंदसिंह जैसे नक्षत्र अवश्य टिमटिमाते हैं। गौरव से भरे ये ऐतिहासिक पल स्थायी नहीं हो पाए, क्योंकि व्यक्तिगत शौर्य और बुद्धि भावी परम्परा का रूप नहीं ले पाए। आचार्य चाणक्य ने यद्यपि एक व्यवस्था देने का प्रयास किया, किन्तु वह राजनीति तक सीमित हो गई और एक पीढ़ी से अधिक नहीं चल पाई— संभवतः

उनकी व्यस्तता और संप्रेषण के साधन न होने से। और भी वीर योद्धा हैं, किन्तु उनके नाम यहाँ इसलिए नहीं दिये जा रहे हैं कि उनकी सामर्थ्य आक्रान्ताओं की शक्ति बनी थी। **अपने वैयक्तिक शौर्य और सामर्थ्य से इतिहास की धारा को मोड़ देने वाली महान् विभूतियों में एक नाम सर्वाधिक द्युति के साथ चमक रहा है। वह नाम है महर्षि दयानन्द सरस्वती का जिसने देश मेंशौर्य और सामर्थ्य के कभी न सूखने वाले स्रोत को सुनिश्चत किया। कैसे?**

आर्यसमाज के संगठनों पर पौराणिक रोग के हमले की अवस्था में भी आर्य वीर दल के स्वरूप के अक्षुण्ण रखने वाले हमारे प्रेरणा स्रोत श्री मदनसिंह जी आर्य कहा करते थे कि किसी देश की हत्या करनी हो तो उसके इतिहास को नष्ट कर दो और युवा पीढ़ी को चरित्रहीन बनाकर भ्रष्ट कर दो, वह राष्ट्र पराजित हो गुलाम बनकर नष्ट हो जाएगा। उपाय भी बताते थे। जब तक उसके नौजवान सच्चरित्र शूरवीर नहीं होंगे, वह राष्ट्र गौरवशाली नहीं बन सकता। इसके साथ ही एक अमेरिकी मूल की कहानी जो कि सीमान्त गाँधी की "पुस्तक मेरा जीवन मेरा संघर्ष (My Life and Struggle)" में भी आई है– वे सुनाते थे कि एक सिंहशावक किसी गड़रिए के हाथ लग जाने पर भेड़ों के झुण्ड में रहने लगा था। किसी बब्बर शेर ने इसे अपनी जाति का अपमान मानकर सब भेड़ों को छोड़कर उसे पकड़ा और जलस्रोत पर लेजाकर उसका प्रतिबिम्ब दिखाया और उसे अपनी पहचान कराकर दहाड़ना सिखाया। वे कहा करते थे कि भेडों के झुण्ड का शेर महाभारतोत्तर काल के भारतीय थे। भेड़ों के साथ रहने वाले शेर को पकड़कर पहचान कराने वाले बब्बर शेर **महर्षि दयानन्द सरस्वती** थे।

महर्षि दयानन्द ने जाना था कि किसी भी परतन्त्र राष्ट्र को स्वतंत्र होने के लिए क्या चाहिए? उसे चाहिए गुलाम से बढ़कर अपनी गौरवमयी पहचान, उसके युवारूपी रक्त का शोधन (सच्चरित्र शूरवीर), प्रेरक नेतृत्व और आत्मविश्वास। सत्यार्थ प्रकाश के कुछ उद्धरण महर्षि के योगदान को बताने हेतु प्रस्तुत है: –

हमारे देश के इतिहास ग्रन्थों रामायण और महाभारत को मिथक घोषित कर दिया गया। ऐसे निराशा के समय में महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास के अंत में आर्य राजा वंशावली देकर महर्षि ने लिखा: "श्रीमन्महाराजे 'युधिष्ठिर' से महाराजे 'यशपाल' तक वंश अर्थात् पीढ़ी अनुमान १२४ (एक सौ चौबीस राजा) वर्ष ४१५७, मास ९, दिन १४, समय में हुए हैं।" अब कोई कहे कि भारत में इतिहास लेखन की परंपरा ही नहीं रही। इतना ही नहीं उन्होनें घोषित किया कि, : "इक्ष्वाकु से लेकर कौरव पाण्डव तक सर्व भूगोल में आर्यों का राज्य और वेदों का थोड़ा–थोड़ा प्रचार आर्य्यावर्त्त से भिन्न देशों में भी रहा। ......अब अभाग्योदय से और आर्य्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त्त में भी आर्य्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतन्त्र

हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार का दुःख भोगना पड़ता है। कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत–मतान्तर के आग्रहरहित अपने और पराये का पक्षपातशून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।"

कल्याण का मार्ग भी महर्षि दिखाते हैं: – "भिन्न–भिन्न भाषा, पृथक्–पृथक् शिक्षा, अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। विना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है। इसलिये जो कुछ वेदादि शास्त्रों में व्यवस्था वा इतिहास लिखे हैं उसी का मान्य करना भद्रपुरुषों का काम है।"

"यह आर्य्यावर्त्त देश ऐसा देश है जिसके सदृश भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है। इसीलिये इस भूमि का नाम सुवर्णभूमि है क्योंकि यही सुवर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है। इसीलिये सृष्टि की आदि में आर्य्य लोग इसी देश में आकर बसे। इसलिए हम सृष्टिविषय में कह आये हैं कि आर्य्य नाम उत्तम पुरुषों का है और आर्य्यों से भिन्न मनुष्यों का नाम दस्यु है। जितने भूगोल में देश हैं वे सब इसी देश की प्रशंसा करते और आशा रखते हैं कि पारसमणि पत्थर सुना जाता है वह बात तो झूठी है परन्तु आर्य्यावर्त्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिस को लोहेरूप दरिद्र विदेशी छूते के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।"

इस देश की अवनति के कारणों को पहचानकर इन कारणों–नास्तिकता, अवतारवाद, पुरुषार्थहीनता, भाग्यवाद, फलित ज्योतिष, मूर्तिपूजा, बालविवाह, नर–नारी असमानता, स्त्रीशूद्रों पर अत्याचार, छुआछूत, जन्मना जातिवाद, कुत्सित आहार, वाममार्ग, वेदविरुद्ध और अनार्ष ग्रन्थों की प्रतिष्ठा, अन्धविश्वास, कुरीतियों, आपसी फूट व उसके कारणों और वेदविरुद्ध मतों का प्रबल खण्डन सत्यार्थ प्रकाश मे करते हुए, विकल्प में देश की उन्नति के कारण–वेद की प्रतिष्ठा, ईश्वर के सच्चे स्वरूप, त्रैतवाद, ब्रह्मचर्यपूर्वक आर्ष प्रणाली से शिक्षा, गुणकर्मस्वभाव मिलाकर विवाह, सत्य की जॉच के लिए पंचपरीक्षा, पंचयज्ञ व षोडश संस्कार की आवश्यकता, वर्णाश्रम धर्म, राजधर्म, एकता के लिए सर्वसन्त्र सिद्धान्त, हमारे गौरवशाली प्रेरणादायी इतिहास का ज्ञान, पाश्चात्य संस्कृति की हानियों व पाश्चात्य मतों के जाहिलपन का खुलासा कर भारत के कल्याण का मार्ग तो खोला ही, विश्व के प्रत्येक मानव के विवेक को जागृत करने का परम उपकार का मार्ग सत्यार्थप्रकाश के रूप में खोला। प्रस्तुत है कुछ झलकियॉ सत्यार्थप्रकाश से:

"जिस देश में यथायोग्य ब्रह्मचर्य विद्या और वेदोक्त धर्म का प्रचार होता है वही देश सौभाग्यवान् होता है।...... जब से विदेशी मांसाहारी इस देश में आके गो आदि पशुओं के मारने वाले मद्यपानी राज्याधिकारी हुए हैं तब से क्रमशः आर्यों के दुःख की बढ़ती होती जाती है। क्योंकि–नष्टे मूले नैव फलं न पुष्पम्।...... भला जो महाभ्रष्ट म्लेच्छकुलोत्पन्न वेश्या आदि के समागम से आचारभ्रष्ट धर्महीन नहीं होते किन्तु देशदेशान्तर के उत्तम पुरुषों के साथ समागम

में छूत और दोष मानते हैं!!! यह केवल मूर्खता की बात नहीं तो क्या है ?....... इन से व्यवहार और गुणग्रहण करने में कोई भी दोष वा पाप नहीं है किन्तु इन के मद्यपानादि दोषों को छोड़ गुणों को ग्रहण करें तो कुछ भी हानि नहीं।....... इसी मूढ़ता (छुआछूत–सं0) से इन लोगों ने चौका लगाते–लगाते विरोध करते कराते, सब स्वातन्त्रय, आनन्द, धन, राज्य, विद्या और पुरुषार्थ पर चौका लगा कर हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं और इच्छा करते हैं कि कुछ पदार्थ मिले तो पका कर खावें। परन्तु वैसा न होने पर जानो सब आर्यावर्त्त देश भर में चौका लगा के सर्वथा नष्ट कर दिया है।........ सुनो प्रमाण– आर्याधिष्ठिता वा शूद्राः संस्कर्त्तारः स्युः । –यह आपस्तम्ब का सूत्र है। आर्यों के घर में शूद्र अर्थात् मूर्ख स्त्री पुरुष पाकादि सेवा करें परन्तु वे शरीर वस्त्र आदि से पवित्र रहें।......... विदेशियों के आर्यावर्त्त में राज्य होने के कारण आपस की फूट, मतभेद, ब्रह्मचर्य का सेवन न करना व विद्या न पढ़ना पढ़ाना वा बाल्यावस्था में अस्वयंवर विवाह, विषयाशक्ति, मिथ्याभाषणादि कुलक्षण, वेदविद्या का अप्रचार आदि कुकर्म हैं। जब आपस में भाई–भाई लड़ते हैं तभी तीसरा विदेशी आकर पञ्च बन बैठता है। क्या तुम लोग महाभारत की बातें जो पांच सहस्र वर्ष के पहले हुई थीं उन को भी भूल गये? देखो! महाभारत युद्ध में सब लोग लड़ाई में सवारियों पर खाते पीते थे, आपस की फूट से कौरव पाण्डव और यादवों का सत्यानाश हो गया सो तो हो गया परन्तु अब तक भी वही रोग पीछे लगा है। न जाने यह भयंकर राक्षस कभी छूटेगा वा आर्यों को सब सुखों से छुड़ाकर दुःखसागर में डुबा मारेगा ? उसी दुष्ट दुर्योधन गोत्र–हत्यारे, स्वदेशविनाशक, नीच के दुष्ट मार्ग में आर्य लोग अब तक भी चल कर दुःख बढ़ा रहे हैं। परमेश्वर कृपा करे कि यह राजरोग हम आर्यों में से नष्ट हो जाय।........"

महर्षि की प्रेरणा से १८५७ की क्रान्ति अब छुपा विषय नहीं है। साथ ही महर्षि के शिष्यों द्वारा देश विदेश में क्रान्तिकारी संगठनों के निर्माण, कांग्रेस जैसे संगठन में भी देशप्रेम का प्राण फूँकनेवाले स्वामी श्रद्धानन्द जी का तप, आर्यसमाज व इसकी शिक्षण संस्थाओं से जन्मे देश–दिवाने, भारत की महान् विभूतियों द्वारा स्वतंत्रता संग्राम में महर्षि और आर्यसमाज के योगदान के उद्धरण आप पढ़ते ही रहते हैं इसलिए पिष्टपेषण न करता हुआ महर्षि के संदेश को दोहराता हूँ क्योंकि यह संदेश जब तक प्रत्येक भारतवासी के मनो मस्तिष्क में नहीं बैठेगा तब तक देश का कल्याण नहीं होगा और यह कार्य दयानन्द के सिपाही नहीं तो और कौन करेंगेः

"...जो उन्नति करना चाहो तो 'आर्यसमाज' के साथ मिलकर उस के उद्देश्यानुसार आचरण करना स्वीकार कीजिये, नहीं तो कुछ हाथ न लगेगा।....."

–कमल किशोर आर्य

अथऋग्वेदादिभाष्यभूमिका

पञ्चम् पुष्प : डॉ. रामनारायण शास्त्री

अथर्ववेद के चार मंत्र लिखने के बाद महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ईश्वर प्रार्थना विषय में यजुर्वेद के चार मन्त्रों का उल्लेख किया है। इनमें प्रथम मन्त्र स्वामी जी महाराज के ग्रन्थों में कई बार उल्लिखित है। यह ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना के प्रसिद्ध आठ मंत्रों में तीसरा मंत्र है-

यआत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।

यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।५।।

महर्षि ने यजुर्वेद के पच्चीसवें अध्याय के तेरहवें मन्त्र का पता देकर इसे यहाँ उद्धृत किया है। यह मन्त्र ऋग्वेद के प्रसिद्ध प्रजापति/हिरण्यगर्भ सूक्त में भी आया है। यजुर्वेद के अनुसार इस मन्त्र का ऋषि प्रजापति तथा देवता=वर्ण्य विषय परमात्मा है । छन्द निचृत त्रिष्टुप् और स्वर धैवत है। ऋषि देवता आदि के विषय में हम प्रारम्भ में विस्तार से लिख चुके हैं। परमपिता परमात्मा आत्मिक ज्ञान-विज्ञान और बल का देने वाला है। सभी देव-विद्वान उसी की उपासना करते हैं, उसी के प्रशासन, अनुशासन और शिक्षा की प्रशंसा करते हैं तथा उसे स्वीकार करते हैं। उसकी छाया आश्रय अर्थात शिक्षा व अनुशासन को स्वीकारना ही अमृत समान सुखदायक है और इसे न मानना ही मृत्यु के समान दु:ख का कारक है। ऐसे उस सुख स्वरूप परमात्मादेव की हम आत्मा और अन्त:करण से उपासना सदा किया करें।

स्वामी जी महाराज ने इस मन्त्र का भाष्य और भाषार्थ इस प्रकार लिखा है:- भाष्यम्- **(य आत्मदाः)** य आत्मदा विद्याविज्ञानप्रदः **(बलदाः)** यः शरीरेन्द्रियप्राणात्ममनसां पुष्ट्युत्साहपराक्रमद्रढत्वप्रदः **(यस्य.)** यं विश्वेदेवाः सर्वे विद्वांस उपासते यस्यानुशासनं च मन्यन्ते, **(यस्य छाया.)** यस्याश्रय एव मोक्षोऽस्ति, यस्याच्छायाऽकृपाऽनाश्रयो मृत्युर्जन्ममरण कारकोऽस्ति, **(कस्मै)** तस्मै कस्मै प्रजापतये **"प्रजापतिर्वै कस्तस्मै हविषा विधेम"** इति शतपथ ब्राह्मणे (**काण्डे** (७,अ.३,ब्रा.१,क. २०), सुखस्वरुपाय ब्रह्मणे देवाय प्रेमभक्ति रुपेण हविषा वयं विधेम, सततं तस्यैवोपासनं कुर्वीमहि।।

भाषार्थ:- **(य आत्मदाः)** जो जगदीश्वर अपनी कृपा से ही अपने आत्मा का विज्ञान देने वाला है, जो शरीर इन्द्रिय प्राण आत्मा और मन की पुष्टि उत्साह पराक्रम और दृढ़ता का देने वाला है। जिसकी उपासना सब विद्वान लोग करते आये हैं और जिसका अनुशासन जो वेदोक्त शिक्षा है, उसको अत्यन्त मान्य से सब शिष्ट लोग स्वीकार करते हैं, जिसका आश्रय करना ही मोक्षसुख का कारण है, और जिसकी अकृपा ही जन्ममरणरूप दु:खों को देने वाली है। अर्थात् ईश्वर और उसका उपदेश जो सत्यविद्या सत्यधर्म और सत्यमोक्ष हैं- उनको नहीं मानना, और जो वेद से विरुद्ध होके अपनी कपोल कल्पना अर्थात् दुष्ट इच्छा से

बुरे कामों में वर्तता है, उस पर ईश्वर की अकृपा होती है, वही सब दु:खों का कारण है और जिसकी आज्ञापालन ही सब सुखों का मूल है, **(कस्मै.)** जो सुखस्वरूप और सब प्रजा का पति है, उस परमेश्वर देव की प्राप्ति के लिए सत्यप्रेम भक्तिरूप सामग्री से हम लोग नित्य भजन करें। जिससे हम लोगों को किसी प्रकार का दु:ख कभी न हो।।५।।

दूसरा मन्त्र भी बड़ा प्रसिद्ध मन्त्र है, जिसको सर्वसाधारण व्यक्ति शान्तिमन्त्र अथवा शान्तिपाठ के रूप में जानता है। यह मन्त्र यजुर्वेद के छत्तीसवें अध्याय का सत्रहवाँ मन्त्र है।

द्यौ: शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति: पृथिवी शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्ति:। वनस्पतय: शान्तिर्विश्वेदेवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्तिस्सर्वं शान्ति: शान्तिरेव शान्ति: सा मा शान्तिरेधि।।६।।

दध्यङ् आथर्वण इस मन्त्र का ऋषि है और देवता अर्थात् वर्ण्य विषय ईश्वर है। इसमें भूरिक् शक्वरी छन्द है तथा धैवत स्वर है। मन्त्र में ईश्वर से प्रार्थना है कि हे ईश्वर! द्यु अन्तरिक्ष और पृथिवी, ये तीनों लोक, जल औषधि और वनस्पति तथा सभी दिव्यगुण युक्त पदार्थ, सभी दिव्य गुणकर्म स्वभाव युक्त विद्वान जन हमारे लिए शान्ति वाले होवें, शान्तिदायक होवें, शान्तिकारक होवें और ब्रह्म अर्थात् वेदज्ञान, मन्त्रशक्ति, अन्न, तप: हमारे लिए शान्ति देने वाला हो। इस तरह सब प्रकार की प्राप्त होने वाली शान्ति सदा सर्वदा बढ़ती रहे। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इस मन्त्र का भाष्य और भाषार्थ इस प्रकार लिखा है।

भाष्यम्- **(द्यौ: शान्ति:)** हे सर्वशक्तिमन् परमेश्वर! त्वद्‌भक्त्या त्वत्कृपया च द्यौरन्तरिक्षं पृथिवी जलमोषधयो वनस्पतयो विश्वेदेवा: सर्वे विद्वांसो ब्रह्म वेद: सर्व जगच्चास्मदर्थं शान्तं निरुपद्रवं सुखकारकं सर्वदाऽस्तु, अनुकूलं भवतु न:। येन वयं वेदभाष्यं सुखेन विदधीमहि। हे भगवन्! एतया सर्वशान्त्या विद्याबुद्धि विज्ञानारोग्य सर्वोत्तम सहायैर्भवान् मां सर्वथा वर्धयतु, तथा सर्वं जगच्च।।

भाषार्थ:- **(द्यौ: शान्ति:)** हे सर्वशक्तिमन् भगवन्! आपकी भक्ति और कृपा से ही 'द्यौ:' जो सूर्यादि लोकों का प्रकाश और विज्ञान है, यह सब दिन हमको सुखदायक हो। तथा जो आकाश, पृथिवी, जल, औषधि, वनस्पति, वट आदि वृक्ष, जो संसार के सब विद्वान्, ब्रह्म जो वेद, ये सब पदार्थ और इनसे भिन्न भी जो जगत् है, वे सब सुख देने वाले हमको सबकाल में हो, कि सब पदार्थ सब दिन हमारे अनुकूल रहें, जिससे इस वेदभाष्य के काम को सुखपूर्वक हम लोग सिद्ध करें। हे भगवन्! इस सब शान्ति से हमको विद्या, बुद्धि, विज्ञान, आरोग्य और सब उत्तम सहाय को कृपा से दीजिए। तथा हम लोगों और सब जगत् को उत्तमगुण और सुख के दान से बढ़ाइये।।६।।

अगला मन्त्र भी यजुर्वेद का है, जो छत्तीसवें अध्याय का बाईसवां मन्त्र है। इस मन्त्र का ऋषि दध्यङ्आथर्वण और देवता ईश्वर है। छन्द भुरिगुष्णिक् तथा स्वर ऋषभ है। इस मन्त्र में ईश्वर से प्रार्थना की गई है कि हे प्रभो! आप जिस जिससे और जहाँ-जहाँ से चाहते हैं वहाँ वहाँ से हमें अभय कीजिए, निडर

बनाइये। हमारी प्रजा और पशुओं के लिए सुख शान्ति और अभय प्रदान कीजिए और हमको प्रजाओं तथा पशुओं से सुख और निडरता प्रदान कीजिए।। श्री स्वामी जी महाराज इस मन्त्र का भाष्य और भाषार्थ इस प्रकार लिखते हैं।

भाष्यम्- **(यतो य.)** हे परमेश्वर! यतो यतो देशात् त्वं समीहसे, जगद्रचनपालनार्थां चेष्टां करोषि, ततस्ततो देशान्नोऽस्मानभयं कुरु। यत: सर्वथा सर्वेभ्यो देशेभ्यो भयरहिता भवत् कृपया वयं भवेम। **(शन्न: कु.)** तथा तत्रस्थाभ्य: प्रजाभ्य: पशुभ्यश्च नोऽस्मानभयं कुरु। एवं सर्वेभ्यो देशेभ्यस्तत्रस्याभ्य: प्रजाभ्य: पशुभ्यश्च नोऽस्मान् शं कुरु। धर्मार्थकाममोक्षादिसुखयुक्तान् स्वानुग्रहेण सद्य: सम्पादय।।

भाषार्थ:- **(यतो य.)** हे परमेश्वर! आप जिस-जिस देश से जगत् के रचन और पालन के अर्थ चेष्टा करते हैं, उस-उस देश से हमको भय से रहित करिये। अर्थात् किसी देश से हमको किञ्चित भी भय न हो। **(शन्न: कुरु.)** वैसे ही सब दिशाओं में जो आपकी प्रजा और पशु हैं, उनसे भी हमको भयरहित करें तथा हमसे उनको सुख हो और उनको भी हमसे भय न हो, तथा आपकी प्रजा में जो मनुष्य और पशु आदि हैं, उन सबसे। जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष पदार्थ हैं, उनको आपके अनुग्रह से हम लोग शीघ्र प्राप्त हो। जिससे मनुष्य जन्म के धर्मादिजो फल हैं, सुख से सिद्ध हो।।७।।

अगला और ईश्वर प्रार्थना विषय का अन्तिम मन्त्र यजुर्वेद के चौतीसवें अध्याय का पाँचवाँ मन्त्र है। यजुर्वेद के चौतीसवें अध्याय के प्रारम्भिक छह मन्त्र **"शिवसंकल्पसूक्त"** के नाम से प्रसिद्ध हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इन छहों मंत्रों का विनियोग शान्ति प्रकरण तथा रात्रिकलीन शयनप्रार्थना के रूप में किया है। मन्त्र का ऋषि: शिवसंकल्प है तथा मन: देवता है। छन्द त्रिष्टुप् और स्वर धैवत है। मन्त्र में प्रार्थना की गई है कि हे परमात्मन्! जिस मेरे मन में ऋग्वेदादि चारों वेद उसी तरह प्रतिष्ठित हैं जिस तरह रथ के पहिये में अरे प्रतिष्ठित होते हैं तथा जिसमें सभी प्रजाओं का चित स्मरणात्मकवृत्ति सन्निहित है, वह मेरा मन शिव कल्याणकारी संकल्पवाला होवे अथवा शिव में कल्याणकारी परमेश्वर में संकल्पवाला होवे। महर्षि ने इस मन्त्र का भाष्य तथा भाषार्थ इस तरह लिखा है। भाष्यम् **(यस्मिन्न्.)** हे भगवन् कृपानिधे। यस्मिन् मनसि ऋच: सामानि यजूँषि च प्रतिष्ठितानि भवन्ति, यस्मिन् यथार्थ मोक्षविद्या च प्रतिष्ठिता भवति, कस्यां क इव? रथनाभौ अरा इव, **(यस्मिंश्च.)** यस्मिंश्च प्रजानां चित्तं स्मरणात्मकं सर्वमोतमस्ति। सूत्रे मणिगणवत् प्रोतमस्ति। तन्मे मम मनो भवत्कृपया शिवसंकल्पं कल्याणप्रियं सत्यार्थप्रकाशकं चास्तु, येन वेदानां सत्यार्थ: प्रकाश्येत।

हे सर्वविद्यामय सर्वार्थविन्! मदुपरि कृपां विधेहि, यया निर्विघ्नेन वेदार्थभाष्यं सत्यार्थं पूर्णं वयं कुर्वीमहि, भवद्यशो वेदान्नां सत्यार्थं विस्तारयेमहि। यं दृष्ट्वा वयं सर्वे सर्वोत्कृष्टगुणा भवेम। ईदृशीं करुणामस्माकमुपरि करोतुभवान्, एतदर्थं प्रार्थ्यते। अनया प्रार्थनयाऽस्मान् शीघ्रमेवानुगृह्णातु। यत इदं

सर्वोपकारकं कृत्यं सिद्धं भवेत्।।८।।

भाषार्थ:- **(यस्मिन्नृचः)** हे भगवन् कृपानिधे! **(ऋचः)** ऋग्वेद **(साम)** सामवेद **(यजूँषि)** यजुर्वेद और इन तीनों के अंतर्गत होने से अथर्ववेद भी, ये सब जिसमें स्थित होते हैं तथा जिसमें मोक्षविद्या अर्थात् ब्रह्मविद्या स्थित है, जैसे रथ के पहिये के नाभिरूप बीच के भाग में आरे स्थित होते हैं अर्थात् जुड़े होते हैं, **(यस्मिंश्चि)** जिसमें सब प्रजा का चित्त, जो स्मरण करने की वृत्ति है, सो सब गँठी हुई है, जैसे माला के मणिये सूत्र में गँठे हुए होते हैं। ऐसा जो मेरा मन है, सो आपकी कृपा से शुद्ध हो। तथा कल्याण जो मोक्ष और सत्यधर्म का अनुष्ठान तथा असत्य के परित्याग करने का संकल्प जो इच्छा है, इससे युक्त सदा हो। जिस मन से हम लोगों को आपके किये वेदों के सत्य अर्थ का यथावत् प्रकाश हो।

हे सर्वविद्यामय सर्वार्थवित् जगदीश्वर! हम पर आप कृपा धारण करें। जिससे हम लोग विघ्नों से सदा अलग रहें। और सत्य अर्थ सहित इस वेदभाष्य को सम्पूर्ण बनाके आपके बनाये वेदों के सत्य अर्थ की विस्ताररूप जो कीर्ति है, उसको जगत् में सदा के लिए बढ़ावे। और इस भाष्य को देख के वेदों के अनुसार सत्य का अनुष्ठान करके हम सब लोग श्रेष्ठ गुणों से युक्त सदा हों। इसलिए हम लोग आपकी प्रार्थना प्रेम से सदा करते हैं। इसको आप कृपा से शीघ्र सुनें। जिससे यह जो सबका उपकार करने वाला वेदभाष्य का अनुष्ठान है, सो यथावत् सिद्धि को प्राप्त हो।।८।।

योग शिविर एवं वेद प्रचार कार्यकम

आर्यसमाज मगरा पूंजला, जोधपुर में १६ से २१,जुलाई २०१८ तक तीन दिवसीय निःशुल्क योग शिविर, वेदप्रचार एवं आध्यात्मिक प्रवचन कार्यकम आयोजित किए गए। इस अवसर पर आर्यवीरदल राजस्थान के प्रान्तीय मंत्री श्री भवदेवजी शास्त्री ने राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय मगरा पूंजला में प्रातः ५:३० बजे से ६:३० बजे तक योग शिविर में योगासन, प्राणायाम, आयुर्वेद, एक्यूप्रेशर एवं पंचगव्य आदि के द्वारा विभिन्न रोगों के निवारण और बचाव की उपयोगी जानकारी प्रदान की। वेद प्रचार कार्यकम में स्थानीय विद्यालयों– मॉ भारती विद्यामंदिर, मॉ शारदा विद्यापीठ, शिव पब्लिक स्कूल, सरस्वती विद्यामंदिर, राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय, तथा सुनीता बाल निकेतन में लगभग चार हजार विद्यार्थियों ने राष्ट्रप्रेम व वैदिक संस्कृति के रक्षार्थ प्रवचनों का लाभ उठाया।

समाज के प्रधान श्री सम्पतराज देवड़ा ने बताया कि सायंकाल में ७:३० से ८:३० बजे तक आध्यात्मि प्रवचन कार्यक्रम आर्यसमाज मगरा पूंजला के प्रांगण में रखा गया। समाज के मंत्री श्री प्रकाशसिंह सॉखला, उपमंत्री श्री हुकमसिंह सॉखला, श्री ब्रह्मसिंह आर्य, श्री प्रेमसिंह सॉखला, श्री विमल शास्त्री, श्री हंसराज गहलोत, श्री जयसिंह भाटी, श्री शैलेन्द्र जांगिड़ तथा श्री महेश गहलोत आदि ने भी सक्रिय सहयोग किया।

(गतांक में आपने पढ़ा कि हमारा वैराग्य रथी दयानंद सच्चे शिव की खोज में पैने हिमखण्डों से भरी अतिशीतल अलकनंदा को ईशकृपा से पार कर गये । सत्य के इस निर्मम उपासक ने द्रोणसागर से शव निकाल परीक्षा कर झूठे ग्रन्थों को शव के साथ ही कैसे बहा डाला और नर्मदा तट के वन में मल्लूक को भगाकर कैसे कल्याणमार्ग निर्मोही पथिक सघन वन का मार्ग चुनता है-पढ़े इस अंक में)

ऋषि-गाथा

द्रोणसागर

रमणीय द्रोण सागर पर, आ पहुँचे श्री स्वामी बर।
सागर में पंकज विकसे, मंडराते भौंरे उन पर ।।१।।

गुन गुन गुञ्जन का मधुरव, मादकता बिखराता था।
सागर चम चम जल पूरित, प्रतिपल हंसता जाता था।।२।।

रवि दर्शन पा मुस्काते, पंकज स्वामी से कहते।
तुम जीवन पथ पर हँसना, जैसे हम खिलते रहते ।।३।।

विधि का निर्देश हमें तो, शीतल जल में गलना है।
कोमल तन पर पीड़ा को, वर मान सहन करना है।।४।।

यदि थक जाये पथ चलता, स्वामिन तब जीवन का हल।
हँसते रहना; मत रोना, होगा वह ईश्वर संबल ।।५।।

विसरा सुन्दर काशीपुर, आया गढ़मुक्तेश्वर में।
कुछ साधु रमण करते थे, अपने अपने ईश्वर में।।६।।

तज कर गढ़मुक्तेश्वर को, संभल जनपद पाया था।
सतगुरु खोजूं मन पट पर, पावन विचार छाया था।।७।।

केवल गुरु अन्वेषण हित, देखे हिम पूरित भू:धर।
कटु क्षुधा तृषा तोली थी, कोमल शरीर काँटे पर।।८।।

कटुरट हिंसक पशुओं की, दुर्गम डरावने जंगल।
पद पद पर पड़े प्रलोभन, था मंगल कही अमंगल ।।९।।

चुभ गया पाँव में काँटा, कण्टक पथ पर जाने से।
विक्षत तन हुआ; बहा था, लोहू सिल टकराने से।।१०।।

छोटे से अस्थि पुंज में, भर रहा अपरिमित साहस,
नन्हे मन में लहराता, जगदीश भक्ति का मानस ।।११।।

कोमल तन, तन में यौवन, यौवन में मदमाता तन।

तन में वैराग्य प्रभाकर, विकसा मन भावन रंजन ।।१२।।

यौवन लहराता सागर, लघु ईश भक्त की नैया।
जग वक्षस्थल पर होकर, ले जाता तरी खिवैया।।१३।।

हठ प्रदीपिका, शिव संध्या, आदिक पुस्तक पढ़ते थे।
पढ़ कर, मस्तिष्क लगा कर, कर ध्यान मनन करते थे।।१४।।

बहती जाती शव बन कर, निष्प्राण देह लहरों पर।
सोचा-कर चक्र परीक्षा, दूँ उत्सुक मन को उत्तर ।।१५।।

कर झट निश्चय स्वामी ने, बहती मृत देह निकाली।
चीरी, फाड़ी, अन्तर की, शंका परिखा भरडाली।।१६।।

अंकित पुस्तक में कुछ था, यह क्रिया और बतलाती।
श्रद्धा अनार्ष ग्रन्थों से, स्वामी की हटती जाती।।१७।।

हैं ये असत्य; जन कल्पित, इनमें कुछ सार नहीं हैं।
इनके पढ़ते रहने से, मानव उद्धार नहीं है।।१८।।

ऋषि ने अनार्ष ग्रन्थों को, गंगा में आज बहाया।
मानो साधक ने तप कर, अन्तर से पाप हटाया।।१९।।

नर्मदा

नर्मदा नदी का कठिन श्रोत, था जिधर चले ऋषि उसी ओर।
कल कल छल छल छल कलित शोर, कर रही तरंगे विकट रोर ।।१।।

था पता न पथ का ज्ञात, चले जाते तो भी दक्षिण पथ पर।
पाया जनपद; लघु तृण निर्मित, कुटिया पर आये महर्षिवर ।।२।।

सत्कार किया, पय पान किया, तन स्नान किया, प्रभु ध्यान किया।
आदेश मिला अभिलाषा का, ऋषि ने आगे प्रस्थान किया।।३।।

टेढ़ा सीधा कंटक पथ ; पर, स्वामी पग बढ़ते जाते थे।
निर्जन था; मानव चिह्न नहीं, मन में न तनिक घबराते थे।।४।।

साधक का जीवन कोष अमर, घबराना शब्द नहीं मिलता।
प्रारम्भ, मध्य अवसान नहीं, "परिणाम" लिखा अन्तिम रहना।।५।।

चलते स्वामी, बढ़ते स्वामी, पथ पर आया भीषण जंगल।
रवि यौवन पा तप्ता धरणी, सूने में थे लोचन चंचल।।६।।

था इतस्तत: रव सांय-सांय, छाई नीरवता पर हिलोर।
तू एकाकी स्वामिन्! कैसे, पायेगा पथ का ओर छोर।।७।।
चुर चुर २ चुरूर मुरूर की ध्वनि, नीरस तरू तले सुनाई दी।
ध्वनि पट में लिपटी आती, काली काली वस्तु दिखाई दी।।८।।
स्वामी सहमे; था एक रीछ, काला काला बालों वाला।
आकर प्रहार उत्सुकता भर, कर दंत कोष फैला डाला।।९।।
भीषण भल्लूक अमंगल सा, खोले मुख, भय फैलाता था।
पैने २ नख पुंजों को, चमकाता था; घुर्राता था।।१०।।
पिछले पंजो पर गात धरा, विकरात काल सा भाता था।
थे स्वामि जहाँ; घुरघुर्राता, दो पाँव बढ़ाता आता था।।११।।
जैसे अत्याचारी सीधे जन पर, अन्याय कमाता है।
जैसे भोले से मत्त मल्ल पर, कोई धाक जमाता है।।१२।।
स्वामी अन्तर में सोच रहा:- बर्बर पशु बढ़ता आता है।
यह हिंसक अपनी हिंसा का, साधक को लक्ष्य बनाता है।।१३।।
वह क्रूर कुटिल आतंक तुल्य, था दयावान ऋषि दयानन्द।
अन्धेर अमावस्या का वह, या स्वामी उज्जवल पूर्णचन्द।।१४।।
भल्लूक क्रूरता झोखों से, ऋषि का तन तरूवर सिहर उठा।
थामा डंडा कर में मानो, पूरा जंगल पथ हहर उठा।।१५।।
चल पड़ा रीछ भय आतंकित, कुछ दूर किया भीषण गर्जन।
गर्जन सुनकर आगये वहाँ, निर्जन वासी ग्रामों के जन।।१६।।
बोले ऋषिवर से श्री स्वामिन्, वह निर्जन भीषणतम जंगल।
इसमें न कहीं मुनियोग गान, विचरा करते हिंसक पशु दल।।१७।।
पर यह दीवाना अभिलाषा के, पंखो पर उड़ता जाता।
भीषण जंगल था यह, भीषणतर में जंगल बढ़ता जाता।।१८।।
आ गया गहन भीषणतम वन, निर्जन के सब तरुगण आये।
झाड़ी आई; काँटे आये, पशु पाद चिन्द गह्वर आये।।१९।।
यह एकाकी साधक ध्रुव सा, ले हृदय अडिग्ग विचारों को।
बैठा तरुवर की छाया में, लखता जग बंधन, वारों को।।२०।।
उस समय देश में युवा प्राण, यौवन सर्वस्व मिटाते थे।
कितनी मांगो से मांग मांग, सिन्दूर दूर हो जाते थे।।२१।।

गोदी के लाल लोहित से, माँ की मांग रचाते थे।
रक्तिम बिन्दी से भारत माता का, वैधव्य मिटाते थे।।२२।।
कितनों के अन्तर ज्वार, प्रलय, करने देने उद्यत खड़े यहाँ।
कितने जन क्रूर फिरंगी से, अवसर पाते भिड़ पड़े यहाँ ।।२३।।
कितनों ने सुख सम्पत्ति सभी, माँ के चरणों पर वारी थी।
इतिहास देखता था– यह सन् ५७ की तैयारी थी।।२४।।
ऋषि भूख प्यास विश्रान्ति धाम, बन बैठ गया, थक चुके पाँव।
तन चूर-चूर था, कुछ क्षण भर को, बना लिया था वहीं ठाँव।।२५।।
जीवन है अटल पहेली सा, होते कितने युग परिवर्तन।
संवत्सर सहलाते आते, आ जाती कुछ घड़ियां निर्धन।।२६।।
आ रहे चले ग्रामीण इधर, सुन्दर वस्त्रों में सजे गात।
आ रहे बाल रवि से उगते, कोमल बालायें थीं प्रभात।।२७।।
आते थे युवा निवेदन से, रमणी पूजा सी आती थीं।
वन झुरमुट में, पाषण मूर्ति पर, दीप शिखा लहराती थी।।२८।।
कुछ दूर मार्ग से महर्षि वर, प्रभु ध्यान लगाये बैठे थे।
जग के आघातों को सहकर, शिर माथ नवाये बैठे थे।।२९।।
ग्रामीणों की लोचन किरणें, करती जातीं प्रतिमा अर्चन।
देखा समीप ही बिखरा है, यह किसका नवनिर्मित यौवन ।।३०।।
क्या यही अमर सेनानी जो, जन मन के अन्तर उकसाता?
क्या यही क्रान्ति का अग्रदूत, विप्लव दावानल सुलगाता।।३१।।
"हैं पर बंधन अभिशाप शाप से, निज बन्धन वरदान हमें।"
जागो जागो भारत यौवन की, जो बतलाता तान हमें।।३२।।
यह कौन अंशु सा तेजवान्, है कौन पुरुष यह वैरागी?
जो पराधीन भारत धरती पर, बैठा पुण्य रूप त्यागी।।३३।।
छोड़ा मन्दिर पूजा त्यागी, स्वामी समीप ग्रामीण चले।
ऋषिवर बैठे थे ध्यान मग्न, अतएव न तत्क्षण हिले डुले।।३४।।
विकसे लोचन ऋषि के, भक्तों ने एक साथ वाणी खोली।
कुछ करो ग्रहण सत्कार, गुंजरित, हुई सघन वन में बोली।।३५।।
मैं वैरागी मैंने जग के, मधुमय भोगों को त्याग दिया।
मानव की दुर्बलताओं ने, बहका कर मुझे विराग दिया।।३६।।

इतना परिचय पाने पर भी, सबने ऋषि का सत्कार किया।
भगवान् एक पर भक्त अनेकों ने, अन्तर से प्यार किया।।३७।।
मिल जाते बिन मांगे मधु क्षण, मांगो न मृत्यु तक मिलती है।
गुन गुन अलि गुंजन व्यर्थ हुआ, बिन कहे जुही खिल पड़ती है।।३८।।
उस सूने से निर्जन वन में, उमड़ी आशा सी पय सरिता।
उन्मुक्त समीरण उड़ उड़ कर, कहता- ग्रामीण हृदय गुरुता।।३९।।
चल दिये मधुर मधु से आमी, स्वामी था वहीं सघन वन में।
रह रह आलिंगन करती थी, निर्जनता मोद भरे मन में।।४०।।
आई राका मधु बिखराती, निज श्यामल अंचल में छिपकर।
कारण; वैरागी था कोई, जग के दु:ख श्रोतों से हट कर ।।४१।।

-श्री विमलचन्द्र शर्मा

आर्यसमाज तलवण्डी कोटा के चुनाव

आर्यसमाज तलवण्डी कोटा के नवनिर्वाचित मंत्री मनीष आर्य ने बताया कि वर्ष २०१८-१९ के लिए हुए चुनाव में श्री गुमानसिंह कुशवाह प्रधान, श्री मनीष गुप्ता मंत्री, श्री मनु सक्सेना कोषाध्यक्ष, श्री भैरूलाल गुप्ता एवं श्रीमती नीरा सक्सेना उपप्रधान, श्री नगेन्द्र सिंह कर्णावट एवं श्रीमती उषा भटनागर उपमंत्री, श्री वीरेन्द्र आर्य पुस्तकालयाध्यक्ष निर्वाचित हुए। श्री कुलदीप सुमन को आर्यवीरदल का अधिष्ठाता निर्वाचित किया गया तथा श्री सुरेश चन्द्र गुप्ता, श्री कृष्णमूर्ति गौतम, श्रीमती ओमलता चौहान, श्री महेन्द्रसिंह आर्य, श्रीमती सुमनबाला सक्सेना व श्री मूलचन्द आर्य अंतरंग सदस्य चुने गए।

गतांक से आगे

आर्यसमाज का इतिहास

उन्नति युग

-विद्यावाचस्पति

1. प्रचारक

(महर्षि की मृत्यु के प्रभाव के बारे में आपने गतांक में पढ़ा । इस अंक में पढ़िए ऋषि के दीवाने संन्यासी, विद्वान्, अधिकारी भजनोपदेशक राजा और राजपुरुष आर्यसमाजों के विस्तार और ऋषि मिशन के प्रचार में लग गए । -सम्पादक

इस परिच्छेद में हम परोपकारिणी सभा के प्रथम अधिवेशन की समाप्ति से पीछे और लाहौर में डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना से पूर्व के समय में आर्यसमाज की जो गति रही, उस पर दृष्टि डालेंगे। वह समय कई प्रकार से असाधारण था। अभी तक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना नहीं हुई थी और न कोई बड़ी संस्था ही खड़ी हुई थी, जिस पर आर्यपुरुषों की शक्तियाँ केन्द्रित होती। आर्यसमाज का शरीर अभी ब्राह्य नियमों में बद्ध नहीं हुआ था। वह इच्छा होने पर बहुत बढ़ सकता था। १८८४ और १८८५ ई. में आर्यसमाज ने जो उन्नति की, जब हम उस पर दृष्टि डालते हैं, तो एक उमड़ते हुए बादल की उपमा स्मरण हो आती है। ऋषि दयानन्द के उत्साह, निर्भयता, धर्म-प्रेम आदि गुण आर्यपुरुषों के हृदयों में बसे हुए थे। वह लोग ऋषि की कार्यप्रणाली को देख चुके थे। उनमें से हरेक अपने आपको ऋषि का पट्टशिष्य और प्रतिनिधि समझता था। अभी तक प्रचारक और आर्यपुरुष में भेद नहीं हुआ था। **हरेक आर्यपुरुष अपने आपको भजन, उपदेश, व्याख्यान और शास्त्रार्थ करने का अधिकारी समझता था। आर्यसमाज में जितने सभासद् थे, उतने ही प्रचारक थे।** ऋषि की मृत्यु ने जो थोड़ी-सी मूर्च्छा उत्पन्न की थी, वह दूर हो गई थी और ऋषि के उद्देश्य को पूर्ण करने की जबर्दस्त उमंग पैदा हो चुकी थी।

यह आश्चर्य की बात है कि- इन दो सालों में हमें बड़े नाम बहुत कम सुनाई देते हैं। चार-पांच महात्माओं नाम बार-बार आते हैं परन्तु अधिक कार्य साधारण आर्यपुरुषों द्वारा ही हुआ है। हम देखेंगे कि इन वर्षों में जितने नए आर्यसमाजों की स्थापना हुई, इतनी किन्हीं दो सालों में नहीं हुई। कई स्थानों पर शास्त्रार्थ हुए, परन्तु जब यह प्रश्न कीजिये कि आर्यसमाज की ओर से कौन-सा पण्डित था, तो उत्तर में ऐसा नाम लिया जायेगा, जो शहर से बाहर किसी को ज्ञात ही न हो। उस समय का धर्मयुद्ध सिपाहियों का था, अन्य किसी का उसमें कोई दखल नहीं था। न बड़े-बड़े सेनापति थे, न फौज के जबर्दस्त हैडक्वार्टर थे, न विशाल तोपें थी और न मशीनगनें थी। उस समय हरेक आर्यपुरुष सिपाही और हरेक सिपाही के हाथ में सत्यार्थप्रकाश की तलवार थी। वह युद्ध खास-खास मैदानों में नहीं लड़ा जा रहा था, वह शहर-शहर, गाँव-गाँव और घर-घर में लड़ा जा रहा था। उस समय युद्ध की कला की नहीं, सत्यधर्म की जय हो रही थी। वह समय सचमुच स्वर्गीय था। नेतृत्व के लिए द्वंद्वयुद्ध आरम्भ नहीं हुए थे, आर्यसमाज पर संस्थाओं का बोझ नहीं पड़ा था। मनुष्यगत निबर्लताएं उस समय भी विद्यमान थीं, परन्तु उन निर्बलताओं को प्रकाशित करने के जो प्रभावशाली साधन पीछे से बन गए, वह अभी नहीं बने थे।

यों तो उस समय आर्यसमाज के सभी सभासद् प्रचारक थे, परन्तु कुछेक विशेष प्रचारकों के नाम भी मिलते हैं। स्वामी आत्मानन्द सरस्वती ऋषि दयानन्द के पट्टशिष्य समझे जाते थे। स्वामी आत्मानन्दजी के उद्योग से इस समय बहुत-सी नई आर्यसमाजें स्थापित हुई। आर्यसमाज में अन्य सब महात्माओं की अपेक्षा स्वामी आत्मानन्द जी का आदर अधिक था। नई सन्तति ने उनका नाम नहीं सुना। आर्यसमाज के इतिहास में कुछेक कुर्बानियों ने बहुत से ऐसे नामों को तिरोहित कर दिया है, जो भुलाने योग्य नहीं थे। जहां पर स्वामी आत्मानन्द जी जाते थे, प्रचार करते थे और यदि पहले से आर्यसमाज विद्यमान न हो तो, स्थापित कर देते थे। १८८३-१८८९ ई. के समय में जितनी आर्यसमाजें उक्त स्वामी जी ने स्थापित की, उतनी किसी ने नहीं की। स्वामी जी में अनेक गुण थे। आपकी स्मरणशक्ति बहुत बलशाली थी। आप आर्यसमाज के चलते-फिरते विश्वकोश थे। जहाँ आप एक बार घूम आये, वहां के प्रधान, उपप्रधान, मन्त्री, उपमन्त्री, कोषाध्यक्ष आदि की पीढ़ी-दर-पीढ़ी जिह्वा पर रहती थी।

दूसरे प्रचारक स्वामी ईश्वरानन्द जी थे। स्वामी सहजानन्द ने भी इस समय आर्यसमाजों में अच्छा प्रचार किया, किन्तु चार-पाँच साल के पीछे आचारभ्रष्ट होकर आर्यसमाज से अलग हो गया। १८८९ में हम उसे आर्यसमाज का कट्टर दुश्मन पाते हैं। सनातन धर्म सभा में देर तक दाल न गलती देखकर फिर साल भर पीछे उसने आर्यसमाज में आने की चेष्टा की। पश्चिमोत्तर प्रदेश की आर्यप्रतिनिधि सभा ने उसे उपदेशक के स्थान पर रख भी लिया, परन्तु पंजाब के समाचारपत्रों ने बड़े जोर का आन्दोलन उठाया, जिसमें पश्चिमोत्तर प्रदेश की प्रतिनिधि सभा की आँखे खुल गई और आर्यसमाज एक अयोग्य मनुष्य के हाथ से बच गया। इससे उस समय के आर्यपुरुषों की आचरण सम्बन्धी तीव्र अनुभवशक्ति का बोध होता है। बम्बई प्रान्त की ओर महता कृष्णराम इच्छाराम जी ने बहुत कार्य किया। आप ऋषि के उन शिष्यों में से थे, जिन्होंने बम्बई में आर्यसमाज की नींव डाली थी। बम्बई की ओर की अधिकांश आर्यसमाजे महता जी के उद्योग के ही फलस्वरूप थी।

२. आर्यसमाजों की संस्था

ऋषि दयानन्द की मृत्यु के एक मास पीछे मेरठ के 'आर्यसमाचार' ने उस समय विद्यमान समाजों की एक सूची प्रकाशित की थी, जिसमें ७९ शहरों के नाम दर्ज थे। यह अवस्था १८८३ के अन्त में थी। १८८५ के जुलाई मास में, लाहौर की 'आर्यपत्रिका' की रिपोर्ट को ठीक मानें तो भारत भर में आर्यसमाजों की संख्या २०० थी। इसके कुछ मास पीछे 'आर्यपत्रिका' के स्तम्भों में ही हम यह समाचार पढ़ते हैं कि भारत भर में २५० आर्यसमाजें हैं। इससे प्रतीत हो सकता है कि आर्यसमाजों की स्थापना के सम्बन्ध में १८८३-१८८५ का स्थान बहुत ऊँचा है। फिर विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि इतना बड़ा कार्य बिना संगठित प्रयत्न के केवल व्यक्तियों के उद्योग से हुआ। प्रारम्भ में आर्यसमाजों की स्थापना का विशेष कार्य पश्चिमोत्तर प्रदेश में हुआ। यह प्रदेश आजकल के उत्तर प्रदेश का स्थानीय था। कारण यह था कि इस प्रदेश

में आर्यसमाज को दो–तीन पंडितों की सेवा का सौभाग्य प्राप्त था। स्वामी आत्मानन्द जी आदि ने भी शुरू में पश्चिमोत्तर प्रदेश में ही कार्य किया। २२ मई १८८४ को स्वामी आत्मानन्द जी मंसूरी पहाड़ पर पहुंचे और कई दिनों तक प्रचार किया। ८ जून को आर्यसमाज की स्थापना हुई, १८८५ के जनवरी मास में स्वामी ब्रह्मानन्द जी के उद्योग से नगीना में और अगले महीनों में सम्भल, पीलीभीत, कर्णवास आदि में आर्यसमाजें स्थापित हुई। सहारनपुर और मेरठ के जिलों में प्रचार का कार्य विशेष वेग से हुआ। पंजाब में १८८५ में स्वामी ईश्वरानन्द जी ने अच्छा कार्य किया। आर्य सभासदों के उद्योग से भी अनेक समाजें बनीं। लाहौर और जालन्धर के जिलों में प्रचार का अधिक जोर रहा। आर्यसमाज जालन्धर के मन्त्री लालादेवराज जी थे, जो अपने धार्मिक उत्साह के कारण ख्याति प्राप्त कर रहे थे। इस आर्यसमाज ने उस समय से ही भविष्य में विशेष उन्नति करने के लक्षण दिखा दिये थे। लाहौर आर्यसमाज की शक्तियाँ अधिकतया शिक्षा का प्रबन्ध करने की ओर लग रही थीं, और आर्यसमाज जालन्धर का झुकाव प्रचार की ओर अधिक था। हम पंजाब की इन दो उठती हुई समाजों में दो प्रवृत्तियाँ देखते हैं, जिनका संघर्ष देर तक चलने वाला था। लाहौर में भी प्रचार के पक्षपाती थे और जालन्धर में भी वैदिक शिक्षा के समर्थक थे परन्तु लाहौर के कार्यकर्ताओं का अधिक भाग प्रचार को शिक्षा की परिभाषा में, और जालन्धर के कार्यकर्ताओं का अधिक भाग शिक्षा को प्रचार की परिभाषा में कहा करता था। आर्यसमाज जालन्धर के मंत्री लाल देवराज उस समय एक उत्साही नवयुवक थे। लाल शालिग्राम जालन्धर के बहुत बड़े रईस थे। उनके विचार सनातनधर्मी थे। पुत्र कट्टर आर्यसमाजी बन गया। यह केवल समाज का मन्त्री ही नहीं बना, वह समाजी भजन भी बनाता था, और समाज में गाता भी था। पिता ने धार्मिक विचारों पर रुष्ट होकर उसे घर से निकाल देने की आज्ञा दी। ऋषि दयानन्द का सच्चा शिष्य शाही जायदाद को लात मारकर बर्मा के लिए चल खड़ा हुआ। धर्मात्मा पुत्र के इस प्रकार चले जाने से प्रेमपूर्ण पिता का दिल पिघल गया। उन्होंने एक आदमी को उसे वापस लाने के लिए दौड़ा दिया। उस आदमी ने धर्मपरायण देवराज को कलकत्ता के बन्दरगाह पर बर्मा के जहाज पर चढ़ते हुए जा पकड़ा। विनयी युवक जालन्धर में वापिस आकर पूरे उत्साह के साथ धर्म की सेवा में लग गया और फिर पिता की ओर से उसके मार्ग में कभी बाधा न डाली गई।

इस समय के प्रचारकों में ब्र. रामानन्द का नाम भी उल्लेखनीय है। यह ब्रह्मचारी ऋषि दयानन्द के साथ रह चुके थे। ऋषि दयानन्द ने ही उन्हें शिक्षा दिलवाई थी। १८८५ में उन्होंने संन्यास धारण करके शंकरानन्द नाम रखा और प्रचार में अच्छा उद्योग किया। इसी वर्ष लाहौर में एक और नाम भी प्रसिद्धि पा रहा था। यह नाम था चौधरी नवलसिंह का। चौधरी नवलसिंह की लावनियों ने लाहौर में धूम मचा दी थी। चौधरी नवलसिंह के तेजस्वी शब्द, उनकी ऊंची आवाज और गाने का प्रभावशाली ढंग अद्‌भुत असर पैदा करते थे। पंजाब में इस समय पं. मूलराज नाम के उपदेशक कार्य कर रहे थे। उन्होंने भी कई समाजों की स्थापना की थी।

महात्मा कृष्णराम इच्छाराम के उद्योग से अहमदाबाद तथा सूरत में भी आर्यसमाजें स्थापित हुई।

3. राजपूताना में जागृति का सूत्रपात

आज हम आर्यसमाज के क्षेत्र में राजपूताना की क्यारी को उसर समझ बैठे हैं, परन्तु जब ऋषि दयानन्द के जीवन के अन्तिम भाग को ध्यान से पढ़ा जाये, तब प्रतीत होता है कि वह राजपूताना को ही आर्यसमाज का चित्तौड़गढ़ बनाना चाहते थे। थोड़े से समय में ऋषि को कामयाबी भी अद्‌भुत हुई थी परन्तु दु:ख है कि राजपूताने के अभेद्य दुर्ग में जो रास्ता ऋषि ने निकाला था, उसमें घुसने वाला कोई न निकला। उसका यह अभिप्राय नहीं है कि पीछे से आर्यसमाज के कोई योग्य विद्वान् रजवाड़ों में गए ही नहीं, अवश्य गए, परन्तु दु:ख है कि प्राय: अर्थी होकर गए, गुरु बन कर नहीं। राजपूताना के कुलीन वीर जानते हैं कि एक अर्थी और एक गुरु में क्या भेद होता है। यह असली और नकली उपदेशक में भेद कर सकते हैं। **याद रहे कि राजपूतानें में वही आचार्य सफलता प्राप्त कर सकता है, जो उदयपुर और जोधपुर के मानी मस्तकों पर लात मार सकता है।** ऋषि ने राजपूताने के शेरों की नाक में नकेल डाल दी थी, ऋषि के अनुयायियों में से जो लोग राजपूताने में गुरु बनने के लिए गए, उनके दिलों में या तो आतंक था और या मतलब था। ऐसे गुरुओं को राजपूताने में मान नहीं मिल सकता था।

ऋषि दयानन्द ने राजपूताने में अनेक शिष्य बनाये थे, परन्तु वे सबसे ऊँचा स्थान महाराणा प्रताप के वंशज महाराणा सज्जनसिंह को देते थे। राजपूताने में उनके मुख्य शिष्य वही थे। ऋषि की मृत्यु के बाद परोपकारिणी सभा का सबसे बड़ा स्तम्भ (महाराणा सज्जनसिंह रूपी स्तम्भ-सं.) गिर गया और राजपूताने की आर्यसमाजों के पांव उखड़ गए। शाहपुरा नरेश महाराजा नाहरसिंह ने महाराणा के वियोग दु:ख को भुलाने का का यत्न किया और आर्यसमाज के कार्य में बहुत उत्साह दिखाया। आपके ही उद्योग के २६ मार्च १८८५ को शाहपुरा में आर्यसमाज की स्थापना हुई।

जोधपुर राजपूताने की एक प्रसिद्ध रियासत है। राठौर राजपूतों का यह किसी समय गढ़ था। यह वही क्रूर भूमि है जहाँ आर्यसमाज के प्रवर्तक को विष दिया गया था और जहाँ व्यभिचार और साम्प्रदायिक पक्षपात ने एका करके अपनी जड़ उखाड़ने वाले का प्राण-हरण करने का बीड़ा उठाया था। ज्येष्ठ संवत् १९४० में दयानन्द का सिंहनाद जोधपुर में होने लगा। उस निर्भय प्रचार के प्रभाव जब जोधपुराधीश महाराज यशवन्तसिंह जी पर पड़ने लगा, तभी घातकों की कुमन्त्रणा का साधन ब्राह्मण कुलोत्पन्न जगन्नाथ बना। जगदुद्धारक ऋषि ने तो पता लगते ही घातक को कुछ धन देकर भगा दिया, परन्तु आर्य-जनता की उठती हुई आशाओं पर वज्रपात ही हो गया। यद्यपि राज्य के बहुत से महानुभावों को ऋषि के सत्संग का सौभाग्य प्राप्त हुआ तथापि उन सबमें से ऋषि के उद्देश्यों को समझकर, उसका आदर केवल महाराज श्री प्रतापसिंह ने ही किया। उस समय न वह ब्रिटिश नाइट थे और न ही उन्होंने जी.सी.एस.आई. की उच्च उपाधि धारण की थी। मेजर जनरल तो क्या, उस समय क्या कोई यह भी सोच सकता था कि उन्हें ब्रिटिश सेना में कोई कप्तान भी बनायेगा। परन्तु ब्रह्मचारी का उपदेश बिजली का-सा असर कर गया और रोगी प्रतापसिंह ने वेदाज्ञानुसार

अपने आत्मिक गुरु से मानसिक प्रार्थना की–

"अश्मा भवंतु नस्तनुः।" हमारा शरीर पत्थर के तुल्य ही दृढ़ हो, और वह शरीर कैसा वज्र के समान हो गया, उसे काबुल की सरहद और फ्रांस के मैदान ही जानते हैं।

महाराज प्रतापसिंह के नाम ऋषि दयानन्द का निम्नलिखित पत्र दोनों के गुरु-शिष्य भाव को प्रकट करता है–

"श्री............महाराज प्रतापसिंह जी आनन्दित रहो। यह पत्र बाबा साहेब को भी दृष्टिगोचर करा दीजिएगा। मुझको इस बात का बहुत शोक होता है कि श्रीमान् जोधपुराधीश आलस्यादि में वर्तमान, आप और बाबा साहेब दोनों रोगयुक्त शरीर वाले हैं।

अब कहिए, इस राज्य का, कि जिसमें सोलह लाख से कुछ ऊपर मनुष्य बसते हैं, रक्षा और कल्याण का बड़ा भार आप लोग उठा रहे हैं। सुधार और बिगाड़ भी आप ही तीनों महाशयों पर निर्भर है। तथापि आप लोग अपने शरीर के आरोग्य, संरक्षण, आयु बढ़ाने के काम पर बहुत कम ध्यान देते हैं। यह कितनी बड़ी शोचनीय बात है। मैं चाहता हूं कि आप लोग अपनी दिनचर्या मुझसे सुनकर सुधार लेवें, जिससे मारवाड़ तो क्या, अपने आर्यावर्त देशभर का कल्याण करने में आप लोग प्रसिद्ध होवें। आप जैसे योग्य पुरुष जगत् में बहुत कम जन्मते हैं....... उत्तम पुरुष जितना अधिक जीवे, उतनी ही देश की उन्नति होती है.... ह. दयानन्द सरस्वती, आश्विन ३ शनिवार सं. १८८५ वि."।

महाराज प्रतापसिंह के निजू शरीर सेवक महाशय लक्ष्मण के हृदय में वैदिक धर्म का अंकुर पहिले-पहल उगा। ऋषि दयानन्द के देहान्त के पश्चात् विक्रमी संवत् १९४२ में ही उन्होंने आर्यसमाज स्थापित किया परन्तु पर्याप्त उपस्थिति न होने के कारण ६ मास में ही उसकी समाप्ति हो गई। सं. १९४५ में स्वामी भास्करानन्द जी के उद्योग से फिर आर्यसमाज स्थापित हुआ। श्री महाराज प्रतापसिंह जी उक्त स्वामी जी का बड़ा आदर करते थे, इसलिए वे उक्त आर्यसमाज के प्रधान बने, जोधपुर राजा के महामंत्री श्री पं. सुखदेवप्रसाद एस.सी.आई.ई. मंत्री बने और अन्य बहुत-से श्रीमानों ने शेष अधिकार लिये। **उस समय जोधपुर की सारी प्रजा ही सभासदों की सूची में सम्मिलित समझी जाती थी और साप्ताहिक अधिवेशनों में दो सहस्त्र से अधिक जन-उपस्थिति होती थी।** व्याकरणाचार्य पण्डित ठाकुरदास, पं. गणेशचन्द्र, पं. अचलेश्वर आदि इसी समय उपदेशक नियत किये गए थे। (क्रमशः)

ओ३म्

सर्वत्र व्याप्त परमात्मा और उसकी प्राप्ति

–आचार्य श्री सत्यानंद वेदवागीश

वेद का वाक्य है – **"पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते..."** (ऋग्वेद ९.८३.१) हे ब्रम्हणस्पते! तें पवित्रं विततं अस्ति! हे ब्रम्हणस्पते! आपका पवित्र स्वरुप विशेष रूप से व्याप्त है । परमात्मा के विशेषण नामों में ब्रह्मणस्पति नाम भी वेद में अनेक बार आया है। ऋग्वेद के द्वितीय मंडल के प्रथम सूक्त में परमात्मा के जो पन्द्रह से अधिक नाम गिनाए गए हैं, उनमें भी ब्रम्हणस्पति है। यथा –**"त्वं ब्रह्मा रयिविद् ब्रम्हणस्पतिः"**।

प्रस्तुत मंत्र में ब्रह्मणस्पते संबोधन है। इसमें दो शब्द है– **ब्रह्मणः** और **पतिः**। हे ब्रह्म के पति स्वामी परमेश्वर! इस संबोधन में जो ब्रह्म शब्द है वह निश्चय ही परमात्मा का वाचक नहीं है। यहाँ ब्रह्म का अर्थ महान् बड़ा है। बड़े का वाचक ब्रह्म शब्द सापेक्ष है। अंगुली से हाथ बड़ा है तो वह ब्रह्म हुआ। उससे बड़ा शरीर है तो वह ब्रह्म। उससे बड़ा भवन, भवन से बड़ा ग्राम या नगर, उससे बड़ा प्रदेश, फिर देश – पृथिवी – सौर परिवार, ये ब्रह्म हो गये। उससे बड़ी आकाशगंगा (Galaxy) ब्रह्म कहलाएगी और एक खरब आकाशगंगाओं वाला अति विस्तृत संसार ब्रह्म हुआ। (There are one hundred Billion galaxies with their multi-billion stars in this cosmos) (Basic Astronomy) प्रश्न होता है कि यह विस्तृत विश्व ब्रह्म कहलाता है?हॉ! यह संसार ब्रह्म पद वाक्य है। इसीलिए इसे ब्रह्मांड कहा जाता है।

तो ब्रह्मणस्पति का एक अर्थ हुआ – जगत का अधिपति स्वामी। पर इस अत्यधिक विस्तृत संसार से भी बड़ी वस्तु है। और वह है प्रकृति। जगत का कारण परमाणु समूह। जिसे अंग्रेजी वाले Materia Radica कहते हैं। परमात्मा इस स्थूल सृष्टि की रचना मूल कारण प्रकृति से करता है, किंतु इसके रचने में संपूर्ण प्रकृति का उपयोग नहीं करता है। प्रकृति का बहुत सा अंश उसी रूप में रहता है। यह बात इससे सिद्ध होती है, कि प्राणियों के मुख्य तीन प्रकार के शरीर हैं, – स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर। यह तीसरा कारण शरीर प्रकृति ही है। सत्यार्थप्रकाश (नवम् समुल्लास) में स्पष्ट लिखा है– "तीसरा कारण जिसमें सुषुप्ति अर्थात् गाढ़ निद्रा होती है, वह प्रकृति रूप होने से सर्वत्र विभु और सब जीवों के लिए एक है। तो स्थूल जगत से = ब्रह्मांड से भी विस्तृत होने से – बड़ी होने से प्रकृति भी ब्रह्म हुई। सो उस प्रकृति रूपी ब्रह्म का भी पति–स्वामी–व्यवस्थापक होने से परमात्मा ब्रम्हणस्पति हुआ।

इस ब्रम्हांड और प्रकृति रूप ब्रह्म से भी एक वस्तु बड़ी है, वह है जीवात्मा। विस्तार में नहीं, किंतु गुणों में। यह स्थूल ब्रह्मांड और प्रकृति जड़ हैं– अचेतन है, जबकि जीवात्मा चेतन है। जीवात्मा में जानने का गुण है। एक चींटी का आत्मा भी जान लेता है कि गुड़ या शक्कर किधर है। जीवात्मा जड़ वस्तुओं का उपभोग करता है। मनुष्य, पशु, पक्षी आदि अपने लिए आवास का निर्माण करते हैं। सो ज्ञातृत्व, भोक्तृत्व और कर्तृत्व के कारण जीवात्मा; स्थूल ब्रह्मांड और प्रकृति

से बड़ा हुआ, अतः जीवात्मा भी ब्रह्म–पद–वाच्य हुआ। सो जीवात्मा रूपी ब्रह्म का पालक–प्रेरक–रक्षक होने से भी परमात्मा ब्रम्हणस्पति है।

वेद का नाम भी ब्रह्म है। **"ब्रह्म वै मंत्रः"** (शतपथ ७.१.१.१५) **"ब्रह्म यजुः"** (शतपथ ३.१.४.१५) **"तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानः"** (ऋग्वेद १.२.४.११)। वेद रूपी ब्रह्म का पति–अधिपति होने से भी परमात्मा का नाम ब्रम्हणस्पति है।

इस प्रकार ब्रह्मांड, प्रकृति, जीवात्मा और वेद रूपी ब्रह्मों का जो पति परमेश्वर है, उसका जो पवित्र स्वरूप है, वह वितत = विशेष रूप से विस्तृत है– व्याप्त है। अभौतिक पदार्थों के स्व में और स्वरुप में कोई भेद नहीं है। केवल कथन मात्र का अंतर है, अतः परमात्मा वितत है – अति विस्तृत – अतिव्यापक है।

जो पदार्थ विस्तृत नहीं है, वे घट, पट, भवन, पर्वत, ग्राम, नगर आदि हैं– वे नेत्रों से दिखाई देते हैं और जो विस्तृत है वे भी चक्षुओं से देखने में आते हैं, जैसे सूर्य आदि। तो अति विस्तृत ईश्वर का दर्शन नेत्रों से क्यों नहीं होता?इसका सीधा सा उत्तर है कि परमेश्वर स्थूल वस्तु नहीं है, वह परम सूक्ष्म है, इसलिए नेत्रों का विषय नहीं है। उदाहरणार्थ वायु को लें। वायु भी ऑखों से देखने में नहीं आती, क्योंकि जल, पृथ्वी आदि के समान वायु स्थूल नहीं है, उनसे सूक्ष्म है। उसका अनुभव हमें त्वचा से होता है। तो वायु से तो एक सौ आठ गुणा सूक्ष्म परमाणुरूप प्रति है। उससे भी सूक्ष्म जीवात्मा है और उससे भी सूक्ष्म परमात्मा है। तो सूक्ष्मातिसूक्ष्म होने के कारण ही वह नेत्र आदि इंद्रियों का विषय नहीं है। फिर प्रश्न होता है कि परमेश्वर की सत्ता पर कैसे विश्वास हो?इसके समाधान के लिए हम महर्षि दयानंद जी के लेख को देखें।

"(प्रश्न) आप ईश्वर ईश्वर कहते हो, परंतु उसकी सिद्धि किस प्रकार करते हो? (उत्तर) सब प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से। (प्रश्न) ईश्वर में प्रत्यक्ष आदि प्रमाण कभी नहीं घट सकते (उत्तर) **"इंद्रियार्थसन्निकर्षोत्पन्न– ज्ञानमव्यपदेश्यमव्यभिचारिव्यवसायात्मकम् प्रत्यक्षम्"** यह गौतम महर्षि कृत न्यायदर्शन का सूत्र है – जो श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, जिह्वा, प्राण और मन का शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, सुख, दुख सत्यासत्य विषयों के साथ संबंध होने से ज्ञान उत्पन्न होता है, उसको प्रत्यक्ष कहते हैं, परंतु वह निर्भ्रम हो। अब विचारना चाहिए कि इंद्रियों और मन से गुणों का प्रत्यक्ष होता है, गुणी का नहीं। जैसे त्वचा आदि इंद्रियों से स्पर्श, रूप, रस, गंध का ज्ञान होने से गुणी जो पृथिवी उसका आत्मायुक्त मन से प्रत्यक्ष किया जाता है, वैसे इस प्रत्यक्ष सृष्टि में रचना विशेष आदि ज्ञानादि गुणों के प्रत्यक्ष होने से परमेश्वर का भी प्रत्यक्ष है। और जब आत्मा, मन और इंद्रियों को किसी विषय में लगाता हुआ चोरी आदि बुरी वा परोपकार आदि अच्छी बात करने का जिस क्षण में आरंभ करता है, उस समय जीव की इच्छा ज्ञानादि उसी इच्छित विषय पर झुक जाते हैं। उसी क्षण में आत्मा के भीतर से बुरे काम करने में भय, शंका और लज्जा तथा अच्छे कामों के करने में अभय, निःशंकता और आनंदोत्साह उठता है। वह जीवात्मा की ओर से नहीं, किंतु परमात्मा की ओर से है। और जब जीवात्मा शुद्ध होकर परमात्मा का विचार करने में तत्पर

रहता है, उसको उसी समय दोनों प्रत्यक्ष होते हैं। जब परमेश्वर का प्रत्यक्ष होता है, तो अनुमान आदि से परमेश्वर के ज्ञान होने में क्या संदेह है?क्योंकि कार्य को देखके कारण का अनुमान होता है।" (सत्यार्थप्रकाशः सप्तम समुल्लासः पृष्ठ १८७)

इसी प्रकार प्रसिद्ध नैयायिक उदयनाचार्य ने स्वरचित न्याय कुसुमांजलि में– **"कार्यायोजनधृत्यादेः पदात् प्रत्ययतः श्रुतेः। वाक्यात् संख्याविशेषाच्च साध्यो विश्वविदव्ययः।"** अर्थात कार्य, आयोजन, धारण,ा वाचक शब्द, विश्वास, श्रुतिप्रमाण, वाक्य रचना शिक्षण और संख्या बोधन इन आठ हेतुओं से परमेश्वर की सत्ता का ज्ञान होता है।

इस प्रकार सुसिद्ध परमात्मा वितत है अति विस्तृततम है। वास्तव में तो जो ऊपर एक खरब आकाशगंगाओं वाले ब्रह्मांड की चर्चा की गई थी, उससे भी अधिक विस्तृत प्रभु है। **एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः। पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।"** (ऋग्वेद १०.६०.३) परमेश्वर की महिमा का जो वर्णन किया गया है उससे भी अधिक उसकी महिमा है क्योंकि यह जो अति विशाल ब्रह्मांड है वह सब मानो उस ईश्वर के एक बटा चार में (One Fourth)में बनता और बिगड़ता है। तीन बटा चार तो उसका इस सबसे अछूता है– अमृतमय है। तो उस अति विस्तृत प्रभु का स्वरूप अर्थात प्रभु पवित्र है। जिससे पूत त्र शुद्ध किया जाता है अर्थात शुद्धि का जो साधन है वह पवित्र कहलाता है। निरुक्तकार कहते हैं **आपः पवित्रमुच्यन्ते** – जल शुद्धि का साधन है। **रश्मयः पवित्रमुच्यन्ते** – किरणें पवित्रता का साधन है और **मंत्राः पवित्रमुच्यन्ते** – मंत्र शुद्धि का साधन है। पर वेद कहता है– **पवित्रं ते विततम् ब्रम्हणस्पते** – अर्थात् आत्मा की पवित्रता का साधन एकमात्र ब्रम्हणस्पति अर्थात् परमेश्वर है।

नवदम्पती ने वृक्षारोपण कर पर्यावरण–शुद्धि का लिया संकल्प

मगरा–पूंजला स्थित आर्य समाज मंदिर महर्षि पाणिनिनगर जोधपुर के प्रधान कैलाश चन्द्र आर्य ने बताया कि शास्त्री शिवराम आर्य ने प्रिंयका संग विजयसिंह टाक का पाणिग्रहण संस्कार वैदिक रीति से करवाया गया। आर्यसमाज के अन्धविश्वास और कुरीतियों को भगाने के संदेश से प्रेरित दूल्हे ने बिना दहेज एवं सादगी से विवाह किया। शास्त्रीजी के पर्यावरण के बारे में उपदेश से प्रेरित होकर विवाह के पश्चात् गणमान्य लोगों की उपस्थिति में नवदम्पती ने यज्ञ भावना को जीवन में आत्मसात् करते हुए, समाज प्रांगण में वृक्ष लगाकर –**वृक्ष लगाओं–पर्यावरण बचाओं** –का पवित्र संकल्प भी लिया। इस अवसर पर समाज के गजेन्द्रसिंह सांखला, संतोष आर्या, प्रमिला सांखला, ललीता सांखला, अदिति आर्या, हरीश, अजीत सिंह, पुखराज, राकेश, गणपत सिंह, नवल, समीर, संदीप, राजू, प्रदीप भी उपस्थित थे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन में लोकायुक्त द्वारा वृक्षारोपण

आषाढ़ पूर्णिमा के अवसर पर महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन मोहनपुरा, रातानाडा में आचार्य सत्यानन्द जी वेदवागीश के ब्रह्मत्व में यज्ञ का आयोजन किया गया। पूर्णिमा की विशेष आहुतियॉं दी गई। यज्ञ के सपत्नीक मुख्य यजमान राजस्थान के लोकायुक्त न्यायाधिपति श्री सज्जन सिंह जी कोठारी थे। यज्ञोपरान्त लोकायुक्त महोदय ने महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन प्रांगण में वृक्षारोपण भी किया।

इस कार्यक्रम में आर्यसमाज सूरसागर, नगर आर्यसमाज गुलाबसागर, आर्यसमाज पाणिनीनगर, आर्यसमाज मगरा पूजंला, आर्यसमाज सरदारपुरा, आर्यसमाज शास्त्रीनगर, आर्यसमाज जालोरियॉं का बास, आर्यसमाज महामंदिर, आर्यसमाज जोधपुर रातानाडा, सहित जोधपुर के सभी आर्यसमाजों से श्री नरपतसिंह भाभा, श्री जयदेवजी अवस्थी, श्री तीर्थलाल जी आसेरी, श्री कैलाशचन्द्र आर्य, श्री ओमप्रकाश जी आसेरी, लक्ष्मणसिंह जी, श्रीश्याम आर्य, श्री पदम सिंह चौधरी, श्री विक्रम सिंह, श्री नरेन्द्र जी, मदनलाल जी तॅंवर, श्री प्रकाश जी, प्रेमसिंह जी, श्री विक्रमसिंह सांखला, श्री दिलीपसिंह, माता चन्द्रकान्ता भाटी, माता शान्तिदेवीजी, बहिन चन्द्रा जसमतिया, बहिन सरस्वती देवी आदि ने उत्साहपूर्वक सहभागिता की। सभी आगन्तुकों का स्वागत न्यास की ओर से मंत्री आर्य किशनलाल गहलोत द्वारा किया गया। कार्यक्रम के अंत में न्यास के कोषाध्यक्ष श्री जयसिंह जी पालड़ी ने सभी का धन्यवाद ज्ञापित किया।

श्री आर्य मरुधर व्यायामशाला में यज्ञ, भजन व प्रवचन!

नगर आर्यसमाज जोधपुर की गुलाबसागर स्थित श्री आर्य मरुधर व्यायामशाला में आषाढ़ पूर्णिमा शुक्रवार 27 जुलाई 2018 को प्रातः यज्ञ, भजन एवं प्रवचन का आयोजन किया गया। मंत्री श्री रामेश्वर जसमतिया ने बताया कि नगर आर्यसमाज जोधपुर के संरक्षक श्री जयदेवजी अवस्थी और उप प्रधान श्री वीरेन्द्र कुमार शर्मा के नेतृत्व में कोषाध्यक्ष श्री यशपाल आर्य, व्यवस्थापक श्री घनश्याम राखेचा, पुस्तकाध्यक्ष श्री सुशील कुमार जी मिश्रा, वरिष्ठ दलपति श्री घनश्यामसिंह तॅंवर, अंतरंग सभा में महिला प्रतिनिधि बहिन चन्द्रा जी जसमतिया, बहिन सुशीला आर्या, आर्यसमाज जालोरियॉं का बास से श्री श्याम आर्य, श्री रामस्वरूप जी आर्य, आर्यसमाज शास्त्री नगर से श्री विक्रमसिंह आर्य, श्री राजेन्द्रसिंह टाक "राजूसा", श्री प्रकाश जी चौहान, श्री भुवनेश आर्य एवं व्यायामशाला के आर्यवीरों ने कायक्रम में सहभागिता की।

देवयज्ञ में पूर्णिमा की विशेष आहुतियों के साथ उपस्थित सभी आर्यजन और आर्यवीरों गायत्री मंत्र से विशेष आहुति आहुति प्रदान की। यज्ञ के पश्चात् माता शान्तिदेवी जी ने परिवार को सुखमय बनने वाले वैदिक आचार की सीख देने वाला सुन्दर भजन प्रस्तुत किया। आर्यसमाज के उपमंत्री कमल किशोर आर्य ने काल से अखंडित और अबाधित रहने वाले और सृष्टि की आदि में वेदज्ञान प्रदान करने वाले परमपिता परमात्मा को परमगुरु बताया, गुरु शिष्य संबंध में सत्य की महत्ता बताई और गुरु को एक दिन विशेष पर नहीं वरन् प्रतिदिन प्रतिपल सम्मान देने की आवश्यकता बताई।

आर्यसमाज सरदारपुरा व शास्त्रीनगर का संयुक्त श्रावणी पर्व तथा आर्यसमाज शास्त्रीनगर का ३४ वॉं वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्यसमाज सरदारपुरा एवं शास्त्रीनगर जोधपुर ने श्रावणी पर्व एवं आर्यसमाज शास्त्री नगर का ३४वॉं वार्षिकोत्सव ४ तथा ५ अगस्त २०१८ को संयुक्त रूप से मनाया। समापन सत्र में श्री राधेश्याम विद्यालंकार के पौरोहित्य में शान्तियज्ञ का आयोजन किया गया। शिवगंज से पधारे श्री केशवदेव आर्य ने सुन्दर भजन प्रस्तुत कर श्रोताओं को भावविभोर कर दिया। प्रवचन में दिल्ली विश्वविद्यालय में कार्यरत वेदमर्मज्ञ डॉ0 शिवपूजन विद्यालंकार ने कहा कि मानव जीवन का उद्देश्य परमेश्वर को जानना है। महर्षि दयानन्द कहा करते थे कि जैसी मति होती है, वैसी ही गति होती है। अतः परमात्मा की व्यवस्था को आत्मसात करते हुए वेदों का अध्ययन करें। मुख्य वक्ता के रूप में सभा को संबोधित करते हुए उन्होनें कहा कि प्राचीन भारत में योगी होते थे, आज के भारत में रोगी होते हैं, जीवन योग के लिए होता है, नित्य योग करोगे तो शरीर और मन स्वस्थ व स्फूर्त रहेंगे। यज्ञ बलिदान का ही दूसरा नाम है, जीवन यज्ञ के लिए होता है, यज्ञ की मुख्य भावना "इदन्नमम" अर्थात् त्याग होती हैं जिसकी आवश्कता आज प्रत्येक परिवार में है।

उत्सव समापन के अवसर पर आर्यसमाज शास्त्रीनगर के नवनिर्मित भव्य मुख्य द्वार का समारोह पूर्वक लोकार्पण किया गया, जिसके मुख्य अतिथि जोधपुर के महापौर श्री घनश्याम ओझा तथा विशिष्ट अतिथि शहर विधायक श्री कैलाश भंसाली थे। जोधपुर शहर विधायक श्री कैलाश भंसाली द्वारा श्री हरेन्द्रगुप्ता, श्री मदनलाल गहलोत, श्री एल.पी.वर्मा, श्री कैलाशचन्द्र आर्य, श्री नरपतसिंह भाभा, श्री लक्ष्मणसिंह, श्री पदमसिंह चौधरी, श्री ब्रजेशकुमारसिंह, श्री श्यामसुन्दर जोशी, श्री राधेश्याम टाक, श्री नरेन्द्र गहलोत, श्री बाबूलाल प्रजापत, श्री नेमीचन्द एवं श्री हड़मानाराम सहित कई आर्यजनों का सम्मान किया गया।

इस अवसर पर आर्य महिला सम्मेलन भी आयोजित किया गया। महिला सम्मेलन में मीनाजी शर्मा, प्रमोद कुमारीजी गुप्ता, शोभाजी आसेरी, मीनाजी टाक, रीटाजी रावल व शारदाजी चारण सहित अन्य आर्य महिलाओं ने सहभागिता की। वार्षिकोत्सव के संयोजक श्री मुकेश रावल थे, कार्यक्रम संचालन श्री चन्द्रशेखर शर्मा ने किया और मंत्री श्री सुधांशु टाक ने आभार जताया। कार्यक्रम रविवार ५ अगस्त २०१८ को सम्पन्न हुआ।

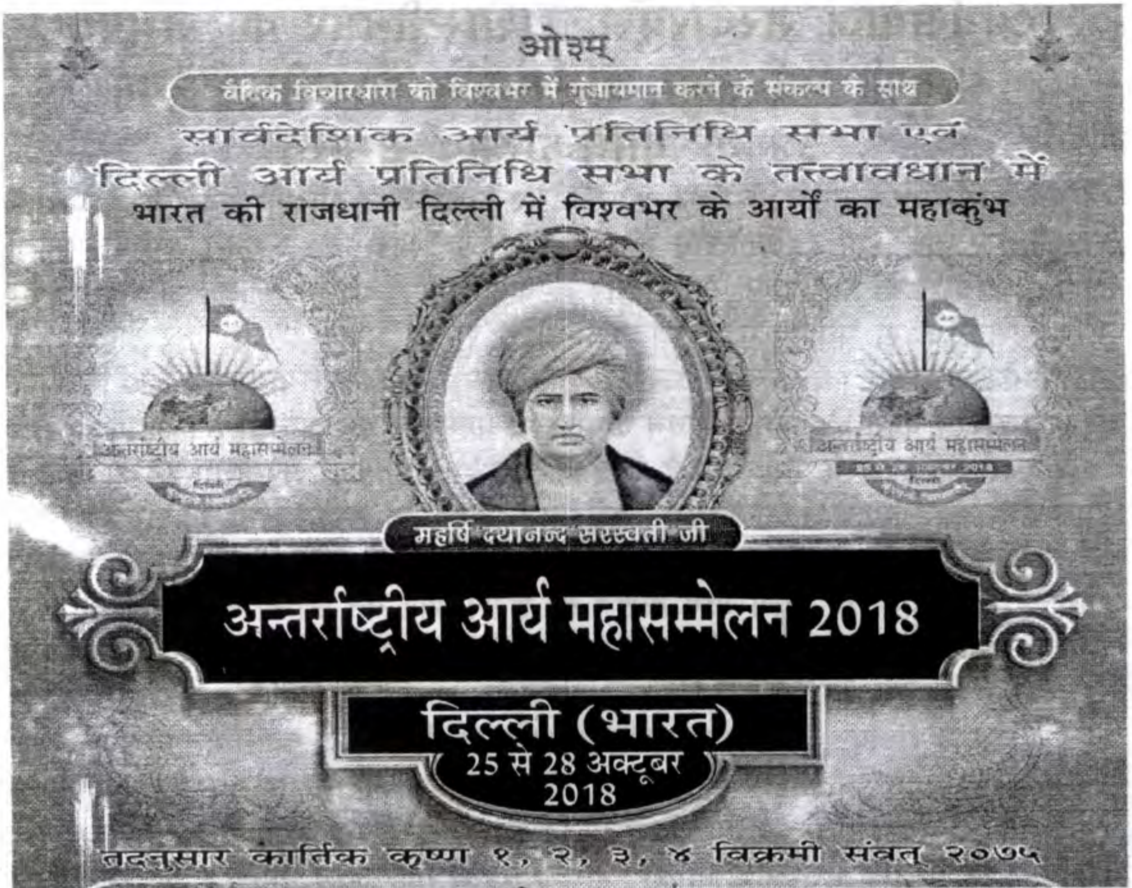

निवेदक :

सुरेशचन्द्र आर्य
प्रधान
सा. आर्य प्रतिनिधि सभा
+91 9824072509

महाशय धर्मपाल
अध्यक्ष
स्वागत समिति
+91 1125937987

प्रकाश आर्य
मंत्री
सा. आर्य प्रतिनिधि सभा
+91 9826655117

धर्मपाल आर्य
सम्मेलन संयोजक
प्रधान–दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा
+91 9810061763

सम्मेलन कार्यालय : दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, 15 हनुमान रोड़, नई दिल्ली : 91 9540029044

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन में आने जाने के लिए रेल भाड़े में छूट के लिए प्रचार पत्रक में दिए सम्पर्क सूत्रों से वार्ता करें । जोधपुरवासी महर्षि दयानन्द स्मृति भवन न्यास के सम्पर्क में रहे ।

महर्षि दयानन्द स्मृति भवन में आगमन युवा सन्यासी स्वामी विवेकानन्द जी न्यासीगण के साथ

शास्त्रीनगर और सरदारपुरा आर्यसमाज में देवयज्ञ

शास्त्रीनगर और सरदारपुरा वार्षिकोत्सव पर शहर विधायक

शास्त्रीनगर और सरदारपुरा आर्यसमाज के आर्यजन

आषाढ़ पूर्णिमा पर आर्य मरूधर व्यायामशाला में यज्ञ करते हुए आर्यजन

Postal Reg. Jodhpur/434/2018-20

Date Of Posting 9,10-8-2018
Date Of Print 5-8-2018

१३५ वॉ ऋषि स्मृति सम्मेलन

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास द्वारा १३५ वॉ ऋषि स्मृति सम्मेलन २८ सितम्बर से ०२ अक्टूबर २०१८ तक स्मृति भवन परिसर में आयोजित किया जा रहा है । आप सभी इस उत्सव में सादर आमन्त्रित है । इस उत्सव में आप आर्यजगत् के मूर्द्धन्य विद्वानों की वक्तृता के साथ-साथ प्रख्यात भजनोपदेशकों के भजन लहरी से भी प्रेरणा पाएंगे । इस उत्सव पर सभी आगन्तुकों के आवास व भोजन की व्यवस्था न्यास द्वारा की जाती है । कृपया अधिकाधिक संख्या में पधारें एवं अपने आगमन की पूर्व सूचना देवें। इस महान् यज्ञ में कृपया अपनी आहूति स्वयं की उपस्थिति और सात्विक दान के रूप में पदान करें । आपसे प्राप्त एक एक पैसा ऋषि मिशन की पूर्ति हेतु समर्पित किया जाएगा ।

सत्वाधिका[illegible] सरस्वती स्मृति भवन न्यास के लिए प्रकाश[illegible] सिंह भाटी द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती स[illegible] महर्षि दयानन्द मार्ग, मोहनपुरा पुलिया के [illegible] ाज.) से प्रकाशित एवं सैनिक प्रिण्टर्स, मकराणा मौहल्ला करू हाऊस जोधपुर फोन नं. 9829392411 से मुद्रित ।

सम्पादक फोन नं. 9460649055

Book-Post